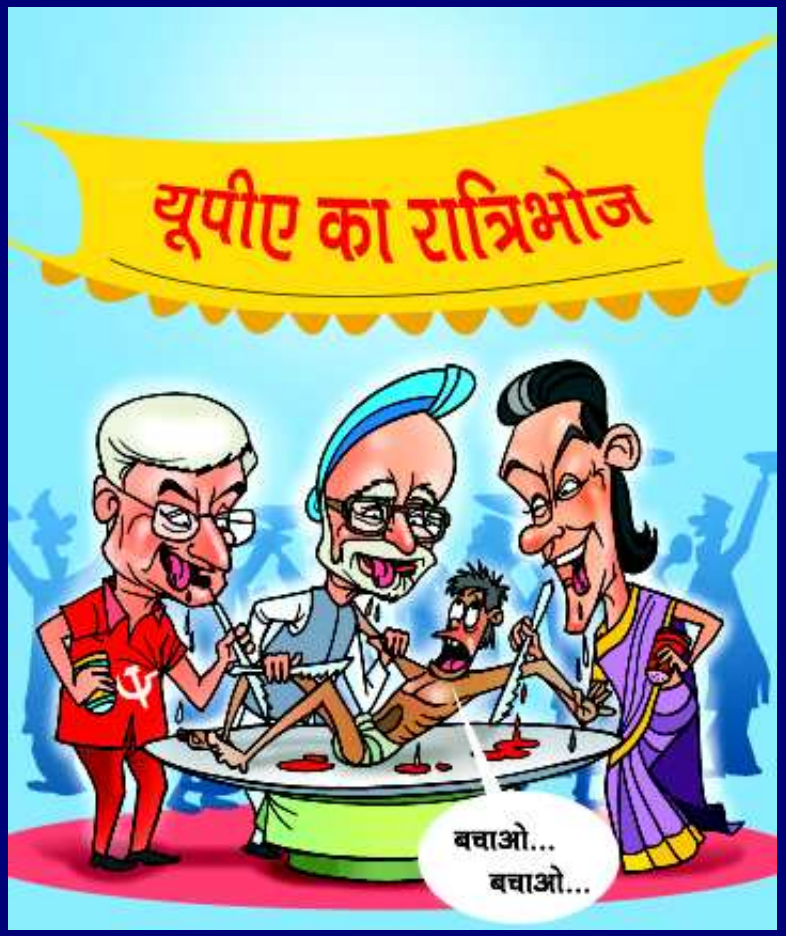
यूपीए का रात्रिभोज
बचाओ...
बचाओ...

भारतीय जनता पार्टी

यूपीए के चार वर्ष
गरीबों के पेट पर लात
राष्ट्रीय सुरक्षा पर आघात
यही है यूपीए की खास बात
आतंकवाद
आतंकवाद
आतंकवाद
महंगाई
कांग्रेस

विषय सूची

१. महंगाई... महंगाई... और बस महंगाई	५
२. आर्थिक कुप्रबंध	१८
३. अप्राकृतिक गठबंधन	२४
४. संवैधानिक संस्थाओं का अवमूल्यन	३१
५. देश के विभाजन का प्रयास	३८
६. श्रीराम सेतु पर प्रहार	४५
७. भारत निर्माण का ढकोसला	५०
८. विफल विदेश नीति	५३
९. खतरे में आंतरिक सुरक्षा	६३
१०.घोटालों की सरकार	८१

यूपीए सरकार में जनता पर महंगाई की मार

केन्द्र में कांग्रेस यूपीए सरकार के कार्यकाल में 'महंगाई' सुरसा के मुख की तरह बढ़ी है। आम आदमी का जीना दुश्वार हो गया है। गरीब मजदूरों के नाम पर रोटी सेंकने वाले वामपंथियों का कांग्रेस को समर्थन गरीबों के पेट पर लात मारने जैसा कृत्य है। समूचा देश महंगाई की चपेट में है। भारतीय जनता पार्टी देश के नागरिकों के सामने महंगाई का 'सच' प्रस्तुत कर रही है।

बढ़ी हुई मूल्य सूची वस्तुएं	कीमतें (प्रति कि.ग्रा.) राजग (मई, 2004)	कीमतें (प्रति कि.ग्रा) यूपीए (मई, 2008)
गेहूं	9	14–16
आटा	10	18–20
मैदा	12	17–20
चावल	10	22–28
ब्रैड	8	15
चीनी	14	20–25
चाय	80	150–180
सरसों का तेल	40	80–85
डालडा घी	40	80–85
देसी घी	130	175–225
मूंग की दाल	24	40–44
अरहर की दाल	26	45–48
मसूर की दाल	22	50–55
चने की दाल	25	44–46
राजमा	28	50–55
गुड़	14	20
बेसन	20	48
दूध	14	24
पनीर	62	120–140
मिट्टी का तेल	18	25–30
एल.पी.जी.	244	295
पैट्रोल	33.15	47.7
डीजल	22.50	32.50
सीमेंट	125	240
स्टील	2300 / टन	4400 / टन
ईंट	1800 / 1000	2500 / 1000
		स्रोतः विभिन्न समाचार पत्रो से

प्रकाशक की ओर से

संप्रग सरकार ने अपनी चौथी वर्षगांठ मनायी। चार वर्षों के कार्यों का लेखा-जोखा भी छपवा कर प्रकाशित किया। रात्रि-भोज देकर जश्न भी मनाया। पर ठीक दूसरी तरफ आम जनता ने भी संप्रग सरकार के ४ वर्ष के रिपोर्ट-कार्ड पर अपना अभिमत दे दिया। कांग्रेस अपने ही गढ़ कर्नाटक में चुनाव हार गयी। जनता ने भाजपा के प्रति विश्वास व्यक्त किया। वर्ष २००४ के बाद कांग्रेस को विधानसभा चुनावों में अधिकांश राज्यों में हार का सामना करना पड़ा है। यह जनता-जर्नादन का मूल्यांकन है।

भारतीय जनता पार्टी को देश ने सन् २००४ के लोकसभा चुनाव में विपक्ष में बैठकर प्रहरी की भूमिका निभाने का दायित्व सौंपा। तब से लेकर अब, जब कांग्रेसनीत यूपीए सरकार ने अपने शासन काल के चार वर्ष पूरे कर लिए हैं। अतः भाजपा ने सोचा कि जनहित में यूपीए सरकार का लेखा-जोखा तैयार किया जाए। हमने सदैव जनप्रहरी की भूमिका का निर्वाह किया है। इस पुस्तक में भाजपा ने आरोप नहीं लगाए हैं बल्कि उन घटनाओं की ओर ध्यान आकर्षित किया है जो पिछले चार वर्षों में घटित हुई हैं और जिनकी वजह से 'आम जनता' के साथ-साथ भारत ही नहीं विश्व में भारत के सम्मान को गहरा आघात लगा है।

यूपीए सरकार के गत ४ वर्ष के कार्यकाल में आम जनता की बुनियादी आवश्यकताओं की पूरी तरह से अनदेखी हुई है। बेलगाम महंगाई ने आम लोगों का जीना मुहाल कर दिया है। वोट-बैंक की राजनीति के कारण राष्ट्रहित से भी समझौता करने से ये सरकार बाज नहीं आ रही है। आर्थिक कुप्रबंधन, संवैधानिक संस्थाओं का अवमूल्यन, किसानों की दुर्दशा, राष्ट्रीय आस्था पर आघात, देश के विभाजन का कुप्रयास, बाह्य एवं आंतरिक सुरक्षा के साथ खिलवाड़ और भ्रष्टाचार तो मानों इस सरकार की पहचान बन गई है। यही यूपीए सरकार की गत चार वर्षों की उपलब्धि है। वहीं वामपंथी दल सत्ता की चाशनी में डूबे हुए हैं। इन चार वर्षों में स्वयं को गरीबों का मसीहा कहने वाले वामपंथियों का जन-विरोधी चेहरा भी बेनकाब हो गया है।

कमजोर यूपीए सरकार और कमजोर प्रधानमंत्री से वामपंथियों ने एक नहीं अनेक बार राजनैतिक तौर पर कालाबाजारी की है। वास्तव में सप्रंग सरकार की यह चौथी वर्षगांठ है। यह सरकार की नहीं वरन् बनते-बिगड़ते समीकरणों की वर्षगांठ है। गठबंधन की हकीकत के सामने कांग्रेस के आत्मसमर्पण की वर्षगांठ हैं।

इन सभी मसलों को भाजपा ने सड़क से संसद तक पूरी ताकत से उठाया और अनेक बार यूपीए सरकार को कठघरे में खड़ा किया।

हमने इस पुस्तक में उन सभी पहलुओं को रखने की कोशिश की है, जो देशवासियों के मन में उमड़-घुमड़ रहा है। अतः यह प्रकाशित भले ही भाजपा कर रही है पर यह सिर्फ आरोप पत्र नहीं बल्कि भारतीय जनमानस के अंतर्मन का दर्द है।

प्रकाशक
भारतीय जनता पार्टी

मई २००८

यूपीए की असफलताएं

यूपीए सरकार ने अपने शासनकाल के चार साल पूरे कर लिए है, अतः स्वाभाविक है कि इसकी तुलना पूर्ववर्ती श्री अटल बिहारी वाजपेयी की नेतृत्व वाली एनडीए सरकार से की जानी चाहिए। इन वर्षों में देश किस दिशा की तरफ बढ़ रहा है, यह हम सबके सामने है। एनडीए सरकार में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने वर्ष २०२० तक भारत को विकसित राष्ट्र एवं २१वीं शताब्दी की महाशक्ति बनाने का संकल्प लिया था। एनडीए सरकार ने उस दिशा में ठोस कदम भी उठाए, जिसके कारण विश्व क्षितिज पर भारत का एक नया स्वरूप उभरकर सामने आया। लेकिन इन चार वर्षों में यूपीए सरकार ने एक के बाद एक गलत और कमजोर निर्णय लिए, जिसके चलते २०२० तक भारत के विकसित राष्ट्र और महाशक्ति बनने का संकल्प और सपना बिखरता दिख रहा है।

खाद्यान्न सुरक्षा से लेकर आण्विक संप्रभुता तक और महंगाई से लेकर आतंकवाद के भंवर में देश को झोंकने वाली ऐसी सरकार जिसके विरूद्ध सर्वोच्च न्यायालय ही नहीं सेना के सर्वोच्च प्रमुख को भी अपना विरोध व्यक्त करने पर मजबूर होना पड़े, ऐसी सरकार के द्वारा क्या विकसित भारत का स्वप्न साकार हो सकता है? यह प्रश्न आम जनता के मन मस्तिष्क में उमड़ रहा है। अतः स्वाभाविक रूप से देश की जनता इसकी तुलना पूर्ववर्ती एनडीए सरकार से कर रही है।

संप्रभुता की दृष्टि से एनडीए सरकार ने जहां पोखरण विस्फोट करके भारत की संप्रभुता और सम्मान को नई ऊंचाइयां दी थी, वहीं यूपीए सरकार ने नाभिकीय समझौते में हमारी आण्विक संप्रभुता पर ही प्रश्न चिन्ह लगा दिया।

एनडीए सरकार में अटलजी एक सर्वमान्य लोकप्रिय राजनेता

प्रधानमंत्री के रूप में थे। जिन्होंने प्रधानमंत्री पद की गरिमा को बढ़ाया। वहीं वर्तमान यूपीए सरकार ने प्रधानमंत्री पद की गरिमा को गिराया है। यह भविष्य के लिए चिंता का विषय है।

आर्थिक दृष्टि से एनडीए सरकार ने महंगाई पर पूर्ण नियंत्रण रखते हुए सुदृढ़ अर्थव्यवस्था के साथ-साथ विकास की तेजी का स्वर्णिम अध्याय रचा था। वहीं यूपीए सरकार के चार वर्षों में महंगाई के हाहाकार से लेकर किसानों की आत्महत्या और एसईजेड नीति के दुरूपयोग ने एक काला अध्याय लिख दिया। ''कांग्रेस का हाथ, आम आदमी के साथ'' का नारा देने वालों का नकाब उतर चुका है।

पूर्ववर्ती एनडीए शासनकाल में समाज के सभी वर्गों के मध्य समानता का भाव स्थापित करने का प्रयास किया गया था। वहीं यूपीए सरकार ने इन चार वर्षों में वोट बैंक के लिए मुस्लिमों को सरकारी नौकरियों, विश्वविद्यालय और बैंक के कर्जों तक में आरक्षण देने की पहल की। तुष्टिकरण यहां तक बढ़ा कि सेना में मुस्लिमों की गिनती करवाने की पहल प्रारंभ कर सामाजिक ताने बाने को तोड़ने का कुत्सित प्रयास किया गया।

सामरिक और कूटनीतिक दृष्टि से एनडीए सरकार ने कारगिल विजय से लेकर लाहौर घोषणा पत्र तक आतंकवाद और पाकिस्तानी घुसपैठ पर प्रभावी नियंत्रण स्थापित किया था। यूपीए सरकार कश्मीर में सेना हटाने से लेकर सियाचीन और सरक्रीक के मुद्दों पर कूटनीतिक तौर पर पूरी तरह विफल हो रही है। वहीं अन्य पड़ोसी देश जैसे नेपाल, श्रीलंका, बंग्लादेश और अफगानिस्तान में आतंकवादी एवं विध्वंसक गतिविधियों के कारण स्थितियां बेकाबू हो रही हैं। केन्द्र की यूपीए सरकार मूक-दर्शक बनी हुई है।

सरकार के समय महंगाई नियंत्रण से लेकर राशन, गैस, दूध, फल, सब्जी और नमक आदि तमाम दैनिक उपयोग की वस्तुओं के साथ-साथ आम आदमी का सपना कहे जाने वाला एक अदद मकान भी आम आदमी की पहुंच में था। आज बढ़ती हुई महंगाई और बढ़ती ब्याज दरों से सब कुछ आम आदमी की पहुंच से दूर होता चला जा रहा है। बेलगाम बढ़ती महंगाई से आम आदमी की कमर टूट गई है। लोग त्राहि-त्राहि कर रहे हैं।

एनडीए सरकार ने पूर्ववर्ती सरकारों से अलग हटकर कुछ एकदम

नये प्रयोग किये थे जैसे राष्ट्रीय राजमार्ग परियोजना, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क परियोजना, आई.टी सेक्टर का विकास, विनिवेश और परमाणु परीक्षण आदि। ये ऐसे अभिनव कार्य थे, जिन्होंने एक नये भारत के स्वरूप की आधारशिला रखी।

भाजपा नेतृत्व की एनडीए सरकार के पास भारत के समग्र विकास और एक वैश्विक महाशक्ति बनने की व्यापक दृष्टि थी। एनडीए सरकार भारत की राजनीति और अंतर्राष्ट्रीय कूटनीति में एक युगांतर स्थापित किया था।

इस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय जगत में भारत की एक नई स्थिति बनी। इस प्रक्रिया ने भारत की सामरिक शक्ति को ही विश्व में स्थापित नहीं किया बल्कि अप्रवासी भारतीयों की भारत के साथ भावनात्मक संबंधों को भी व्यावहारिक और देश के प्रगति के लिए एक आर्थिक माध्यम के रूप में स्थापित किया। इसके साथ एनडीए सरकार ने टेक्नालॉजी के क्षेत्र में अद्‌भुत प्रगति की, खाद्‌यान्न और कृषि के क्षेत्र में अग्रणी हो गये और सभी चुनौतियों को पार करके भारत एक आर्थिक महाशक्ति के रूप में विश्व के सामने आया। कोई भी देश केवल सामरिक शक्ति के द्वारा सैन्य महाशक्ति नहीं बन सकता। उसके लिए कूटनीतिक दक्षता भी परमआवश्यक है। एनडीए के शासनकाल में कूटनीति के धरातल पर हमारी सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि हमने पाकिस्तान के साथ भारत की तुलना का युग समाप्त कर दिया।

एनडीए सरकार ने विश्व व्यापार संगठन की सिएटल (१९९९) और दोहा (२००१) के माध्यम से संपूर्ण विश्व व्यापार पर पश्चिमी देशों और अमेरिका के वर्चस्व को समाप्त किया। विश्व व्यापार संगठन की आंतरिक व्यवस्था को अधिक लोकतांत्रिक बनाया। विश्व के इतिहास में पहली बार आर्थिक कूटनीति में भी भारत की विजय हुई। बेहतरीन कूटनीति के चलते भारत स्पष्ट रूप से विश्व की एक सैन्य-आर्थिक शक्ति के रूप में स्थापित हुआ।

भाजपा नेतृत्व की एनडीए सरकार के समय में आदरणीय अटल जी के नेतृत्व में भारत सिर्फ एक हार्ड पावर या सैन्य-आर्थिक शक्ति ही नहीं बल्कि एक सॉफ्ट पावर या सौम्य-सांस्कृतिक शक्ति के रूप में भी विश्व के सामने उभर कर आया। भारत की वास्तविक शक्ति का समग्र रूप से उदय प्रारंभ हुआ था। यह सच्चे अर्थों में "भारत उदय"

हो रहा था।

कई बार राजनीति में जनमानस तक संदेश को पहुंचाने में वर्षों का समय लग जाता है। यूपीए के इस चार वर्ष के कुशासन को अनुभव करने के बाद देश का जनमानस अब एनडीए के शासन द्वारा भारत के वास्तविक उदय के प्रयासों की सार्थकता को अब बेहतर तरह से समझ रहा है।

आम जनता अब यह समझने लगी है कि ''आम आदमी का हाथ कांग्रेस के साथ'' जैसा नारा आम आदमी के साथ विश्वासघात है। कांग्रेस ने आम जनता को धोखा दिया है। केन्द्र की यूपीए सरकार ने भारत की आत्मा की सदैव उपेक्षा की है। वोट बैंक की राजनीति का घिन्नौना खेल खेल रही है। यूपीए सरकार इन चार वर्षों में वामपंथियों की ताल पर ''ता-ता, थैय्या'' करती रही है।

इस कांग्रेसनीत यूपीए सरकार ने कांग्रेस के चुनाव घोषणा पत्र में तथा निर्वाचन के बाद न्यूनतम साझा कार्यक्रम में किए गए किसी भी वादे को निभा नहीं पाई है।

आज यूपीए के शासन में यदि विकास की थोड़ी बहुत झलक कहीं दिखाई भी पड़ती है तो ये पूर्ववर्ती एनडीए सरकार की इसी आधारशिला का विस्तार मात्र है। आज की यूपीए सरकार से जनता पूछ रही है कि इन चार वर्षों में उसने एक भी नया प्रयोग विकास कार्य के लिए किया है? यदि किया है तो देश को बतायें। सच तो यह है कि उपलब्धियों के नाम पर वर्तमान केन्द्र की यूपीए सरकार की झोली खाली है इन चार वर्षों में कांग्रेस नीत यूपीए सरकार चार उपलब्धियां भी गिना पाने में असमर्थ है।

देश के समक्ष चुनौतियां ही चुनौतियां

महंगाई... महंगाई... और बस महंगाई

महंगाई ने जिस तरह सुरसा सरीखा मुंह खोल लिया है उससे आम बजट और छठे वेतन आयोग का छलावा सामने आ गया है। चुनावी सौगात देने के आवेश में केन्द्र की यूपीए सरकार आम आदमी के तीन बुनियादी जरूरतों रोटी, कपड़ा और मकान का ख्याल करना भूल गई है। मार्च व अप्रैल के महीने में राजधानीवासी से लेकर देश के हर शहर व ग्रामवासियों के पसीने छूट रहे हैं। ऐसी गर्मी अभी नहीं पड़ रही है पर कमर तोड़ महंगाई ने पसीना निकाल दिया है। रोज इस्तेमाल होने वाली वस्तुओं की कीमतों में तो मानो आग लग गई है। यूपीए सरकार के वित्तमंत्री पी. चिदम्बरम के जिस बजट को देखकर यूपीए सरकार की बांछे खिली थीं और प्रधानमंत्री ने इसे आम आदमी का बजट बताया, उस बजट को अब महंगाई ने मुंह चिढ़ाना शुरू कर दिया है। बजट पेश होने के दो महीने बाद आज हालत यह है कि आम आदमी जहां रोटी दाल के लिए हलकान है तो सरकार कीमतों पर रोक लगाने में नाकाम साबित हो रही है।

बढ़ती महंगाई ने पिछले कुछ वर्षों के सारे रिकार्ड तोड़ दिए हैं। चुनावी वर्ष में मतदाताओं को आकर्षित करने के लिए सारी जुगत कर रही यूपीए सरकार को इस

महंगाई ने धरातल पर ला खड़ा किया है। महंगाई ने आम आदमी के सस्ते कर्ज के सपने को तोड़ दिया है। साथ ही यूपीए का चुनावी खेल भी बिगाड़ दिया है। अब तो बड़ी बेशर्मी के साथ कांग्रेस ने भी मान लिया है कि महंगाई बेलगाम हुई है। इससे यूपीए के घटक दलों की नींद भी उड़ गयी है।

केन्द्र की यूपीए सरकार के लगभग चार वर्ष के कार्यकाल में मूल्यों में वृद्धि का सिलसिला लगातार जारी है। वर्ष २००४ में जब यूपीए सत्ता में आयी तभी आम जनता में यह चर्चा चल पड़ी थी कि कांग्रेस की सरकार आ गई है अब महंगाई भी बढ़ेगी। यह चर्चा हर गली चौराहे पर होती थी। लोगों की आशंका भी सच साबित हुई। सत्ता में आते ही मई २००४ में महंगाई जिस तेजी से बढ़ी तो फिर उसने पलट कर नहीं देखा। श्री अटल बिहारी वाजपेयी की नेतृत्व वाली एनडीए सरकार ने जिस तरह से महंगाई पर नियंत्रण लगाया हुआ था वह नियंत्रण यूपीए सरकार के कार्यकाल में हट गया और महंगाई तेजी से बढ़ने लगी आम जनता को फर्क साफ नजर आने लगा। २००४ से ही महंगाई का यह जो सिलसिला चला वह २००८ आते-आते सातवें आसमान पर जा पहुंचा है और मूल्यवृद्धि का यह क्रम अभी भी जारी है।

इस बीच कांग्रेस सुप्रीमो व कांग्रेस नीत यूपीए सरकार की चेयरपर्सन सोनिया गांधी सार्वजनिक तौर पर महंगाई पर चिंता जताने के साथ-साथ प्रधानमंत्री को पत्र लिखने का नाटक करती रही है। यही नहीं कांग्रेस की कार्यसमिति में चिंता व्यक्त करने के अलावा कांग्रेस शासित राज्यों के मुख्यमंत्रियों की विशेष बैठक भी इस मुद्दे में बुलायी जाती रही है पर नतीजा वही ''ढाक के तीन पात'' वाली कहावत सिद्ध कर रही है। नतीजा ''सिफर''। महंगाई थमने के बजाय सुरसा के मुंह की तरह दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती जा रही है।

ड्रीम टीम महंगाई रोकने में असफल

इसे देश का सौभाग्य कहें या दुर्भाग्य कि वर्तमान केन्द्र सरकार के शीर्ष पदों पर अर्थशास्त्र के ज्ञाता विराजमान हैं। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह एक राजनेता के बजाय अर्थशास्त्री के रूप में ज्यादा पहचाने जाते हैं वहीं केन्द्रीय वित्तमंत्री पी. चिदम्बरम भी अर्थ जगत के अच्छे जानकार माने जाते हैं यही बात योजना आयोग के उपाध्यक्ष मोंटेक

सिंह अहलूवालिया के बारे में भी कही जा सकती है। फिर भी सरकार की इस ड्रीम टीम को महंगाई का भान तब होता है जब आंकड़े सामने आते हैं। आखिर ये कैसे अर्थशास्त्री हैं जो समय रहते आने वाले संकट के बारे में अनुमान भी नहीं लगा पाते। आर्थिक विकास दर और शेयर बाजार के आंकड़ों पर यह कथित अर्थशास्त्रियों की तिकड़ी अपनी पीठ चाहे जितनी थपथपा ले पर इन ४ वर्षों में महंगाई के मोर्चे पर यह ड्रीम टीम पूरी तरह नाकाम साबित हुई है।

महंगाई की दर उच्चतम स्तर पर

मुद्रास्फीति की दर का उछलकर ४ वर्ष के उच्चतम स्तर पर पहुंचना वर्तमान केन्द्र सरकार के मुंह पर एक करारा तमाचा है। आंकड़ेबाज अर्थशास्त्रियों और सत्तारूढ़ राजनेताओं के लिए यह विचार करने योग्य है कि यदि वे गत एक वर्ष के ही मुद्रास्फीति की दर के आंकड़े को देख लें तो सितम्बर २००७ में थोक मूल्य सूचकांक की दर ३.२ थी जो अपवादस्वरूप अक्टूबर व नवम्बर में ३.१ पर आ गयी लेकिन उसके बाद से तो लगता ही नहीं कि इस सरकार का कोई नियंत्रण इस महंगाई पर रहा हो। १ दिसम्बर २००७ में यह दर छलांग लगा कर सीधे ४.१ पर जा पहुंची तो जनवरी २००८ में ४.२१ पर, यूपीए सरकार महंगाई के मोर्चे पर किस कदर निकम्मी व असफल साबित हुई इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि थोक मूल्य सूचकांक की यह दर फरवरी माह में उछलकर ४.५ तो बजट के

पेश होते ही मार्च में ५.६२ तो मार्च के अन्त में ६.६८ प्रतिशत और तो और यह सातवें आसमान पर चढ़ गई है। अप्रैल के प्रथम सप्ताह से ही मुद्रास्फीति की दर सात प्रतिशत से ऊपर तक पहुंच जाने पर केंद्रीय सत्ता के नीति-निर्माता यह सफाई पेश करते रहे कि पिछले दिनों उन्होंने मूल्य वृद्धि पर लगाम लगाने के जो प्रयास किए उनका प्रभाव अभी सामने आना शेष है, लेकिन हुआ उलटा महंगाई घटने के बजाये महंगाई बढ़ने के कीर्तिमान स्थापित होने लगे। महंगाई दर थमने का नाम नहीं ले रही है। गत ३ मई को खत्म सप्ताह में महंगाई की दर ७.८३ फीसदी पर पहुंच गई। यह ४४ महीने का उच्चतम स्कोर है।

यह संभव है कि केंद्र सरकार महंगाई थामने के लिए बचे खुचे उपायों का भी सहारा लेने के लिए विवश हो जाए, लेकिन आज यदि उसके पास ज्यादा विकल्प नहीं नजर आ रहे हैं तो इसके लिए वह खुद ही जिम्मेदार है। वह शायद ही यह समझ सके कि समय रहते सही कदम न उठाने के कारण ही महंगाई के मामले में हालात बेकाबू से हो गए हैं। जाहिर है, महंगाई के मोर्चे पर मनमोहन सरकार के किसी भी कदम का अगर उसने उठाये हैं- कोई प्रभाव नजर नहीं आता।

आज यदि महंगाई चौतरफा मार करती दिख रही है तो इसलिए कि केंद्र सरकार न तो भावी अंतर्राष्ट्रीय माहौल का आकलन कर सकी और न ही घरेलू हालात का। यदि खाद्यान्न की कीमतें काबू में होतीं तो महंगाई के असर को कम किया जा सकता था। ऐसा इसलिए नहीं हो सका क्योंकि अर्थशास्त्रियों से लैस केंद्रीय सत्ता ने यह अनुमान लगाने की दिलचस्पी तक नहीं दिखाई कि आने वाले समय में खाद्यान्न की पर्याप्त उपज होगी या नहीं? समस्या इसलिए और अधिक बढ़ गई, क्योंकि खाद्यान्न आयात के फैसले लेने में अनावश्यक देर की गई। पिछले कुछ दिनों से महंगाई के पीछे जमाखोरों और बिचौलियों की भूमिका का जिस तरह जिक्र होने लगा है उससे तो यह लगता है कि हर कोई केंद्रीय सत्ता की कमजोरी का लाभ उठा रहा है। आठ फीसदी आर्थिक विकास दर का गुणगान करने वाली इस केन्द्र सरकार ने कृषि क्षेत्र को एकदम उपेक्षित छोड़ दिया है। इन चार वर्षों के कार्यकाल में देश के किसानों की पूरी तरह अनदेखी की गई है। किसानों के आत्महत्या का सिलसिला अभी भी जारी है। परन्तु इस कुम्भकर्णी

सरकार की नींद अभी भी टूटी नहीं है। फिर कच्चे तेल की बढ़ती कीमतें और स्थिर अनाज पैदावार ने भारत को फिर खाद्य संकट के मुहाने पर ला खड़ा किया है।

यह सब केन्द्र की यूपीए सरकार की असफल नीतियों का ही परिचायक है। यही नहीं अब भारत की अर्थव्यवस्था अब एक ऐसे मुकाम पर आ खड़ी हुई है जिससे यूपीए सरकार और उसके घटक दलों के हाथ पांव भी फूलने लगे हैं। महंगाई के कारणों को लेकर सरकार द्वारा समय-समय पर की जाने वाली टिप्पणियां भी उसकी संवेदनशून्यता और दिशाहीनता को ही जाहिर करती हैं। खुद प्रधानमंत्री और उनके वित्तमंत्री कभी महंगाई को अर्थव्यवस्था में मजबूती का स्वाभाविक परिणाम बताते हैं तो कभी अंतर्राष्ट्रीय मंदी का नतीजा। इसका मतलब तो यह हुआ कि यूपीए सरकार के बस में कुछ है ही नहीं और यदि वास्तव में ऐसा है तो उसके सत्ता में रहने का औचित्य क्या है? सवाल उठता है कि किसी भी देश के लिए अर्थव्यवस्था की उस मजबूती के क्या मायने हैं जब आदमी को दो वक्त की रोटी भी नसीब न हो पाये? वर्तमान केन्द्र सरकार और अर्थशास्त्रियों के लिए महंगाई सिर्फ आंकड़ों का विषय हो सकता है। पर आम आदमी के लिए तो यह जीवन मरण का प्रश्न है। इस बेलगाम महंगाई ने आम आदमी का बजट ही नहीं जीवन का ढांचा ही चरमरा दिया है।

दरअसल थोक मूल्य सूचकांक की दर भी आम आदमी पर महंगाई की मार का पूरा सच बयान नहीं करती। आम उपभोक्ता वस्तुओं की कीमतों में फुटकर बाजार में हाल ही में छह से २५ प्रतिशत तक का उछाल आया है। जीवन-यापन के लिए अनिवार्य वस्तुओं की ही बात करें तो पिछले वर्ष अक्तूबर में सरसों का तेल ६५ से ७० रूपये प्रति लिटर था, जो अब बढ़कर ८२ से ८५ रूपये हो गया है। इसी तरह सोयाबीन या रिफांइड तेल ५५-६५ रूपये से बढ़कर ९६-१०० रूपये पर पहुंच गया है। औसत चावल का दाम भी १४-१८ रूपये प्रति किलो से उछलकर १८-२५ रूपये पर पहुंच गया है तो उड़द दाल का दाम ३८-४० रूपये से बढ़कर ४६-५८ रूपये पर। अरहर दाल ३६-४० रूपये से बढ़कर ४५-४८ रूपये हो गयी है तो गेहूं ९-१० रूपये से बढ़कर १२-१४ रूपये। सब्जियों और फलों के दामों में तो और भी ज्यादा उछाल आया है।

चुनावी बजट के बाद बेलगाम हुई महंगाई

केन्द्र सरकार के बजट के सप्ताहभर बाद से ही खाद्यान्न की कीमतें बढ़नी शुरू हो गई थी। बजट के बमुश्किल ४८ घंटे बाद ही खाद्यान्न व रोजमर्रा की वस्तुओं की कीमतों में दो तीन फीसद बढ़ोतरी दर्ज की गई। १५ फरवरी से अब तक करीब हर वस्तु की थोक बाजार में कीमत प्रति किलो १ से लेकर १७ रूपए तक बढ़ चुकी हैं। खुदरा बाजार में इनकी कीमतों में कम से कम दो से २३ रूपए तक की बढ़ोतरी हुई है। चार दिन पहले साधारण चावल १७ रूपए किलो मिल रहा था वह बढ़कर २५ रूपए हो गया है। अरहर, मसूर, मूंग, चना, उड़द समेत अन्य दालों में भी ५ से १५ रूपए तक बढ़ोतरी हुई है। थोक बाजार में गेहूं की कीमतों में भी प्रतिकिलो चार से छह रूपए तक की बढ़ोतरी हुई है। इसका सीधा असर आटे की कीमतों पर पड़ा है और इसमें लगभग दोगुना बढ़ोतरी हुई है। वनस्पति घी, रिफाइंड, सरसों के तेल में तो ८ रूपए से १२ रूपए तक बढ़ोतरी हुई है। गर्म मसालों, हल्दी, धनिया, मिर्च, अजवाइन, जीरे की कीमतें भी बढ़ी हैं। खाद्यान्न वस्तुओं के साथ ही ग्रॉसरी में भी तेजी आई है। नहाने का साबुन, शरीर में लगाने का तेल, शैम्पू, टूथपेस्ट, ब्रश, के दामों में भी ३ से ५ रूपए का इजाफा हुआ है। सब्जियों की कीमतें भी आसमान छू रही हैं। गौरतलब है कि थोक बाजार में यदि दो रूपए की बढ़ोतरी होती है तो उसी चीज की खुदरा कीमत ८ से १० रूपए तक बढ़ जाती है और भुगतना आम लोगों को सहना पड़ता है।

कांग्रेस का हाथ आम आदमी के साथ यह नारा देकर सत्ता में आई कांग्रेसनीत यूपीए सरकार की कलई खुल गई है। कांग्रेस (आई) के सत्ता में आते ही आम आदमी पर महंगाई शामत बनकर आई है। कमरतोड़ इस महंगाई से आम जनता को यह समझ आ गया है कि कांग्रेस का हाथ आम आदमी के साथ विश्वासघात है। अब तो आम आदमी भी बस यही दुहाई दे रहा है महंगाई... महंगाई... और बस महंगाई, अब कुछ तो रहम करो मनमोहन भाई।

किसानों की दुर्दशा

केन्द्र में यूपीए सरकार आने के बाद आम आदमी को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा है। परन्तु यदि किसी एक वर्ग पर मानो विपदा का बादल फट पड़ा हो तो वह है कृषक वर्ग। किसानों

को उचित मूल्य पर बिजली, पानी, खाद तो नहीं मिल पा रही है और साथ ही साथ वह कर्ज के दुष्चक्र में इस कदर उलझते जा रहे हैं कि एक सीमा के बाद वे आत्महत्या करने पर विवश हो जाते हैं। किसानों की आत्महत्या जितनी भारी संख्या में पिछले कुछ वर्षों में हुई है वह भारत के इतिहास में ऐसा शर्मनाक अध्याय पहले कभी नहीं देखा गया।

एक तरफ भारत में औद्योगिक उन्नति के नये आयाम दिख रहे हैं। कई भारतीय उद्योगपति प्रतिष्ठित विदेशी कंपनियों का अधिग्रहण कर रहे हैं, परन्तु दूसरी तरफ जितनी भारी संख्या में किसान आत्महत्या को विवश हो रहे हैं, यह राष्ट्रीय शर्म का विषय है और इसके लिए यूपीए सरकार की अक्षमता और उपेक्षा भी उतनी ही निन्दनीय है।

एक तरफ देश में करोड़पतियों की संख्या बढ़ रही है, बाजार महंगे लग्ज़री उत्पादों से चकाचौंध हो रहे हैं, तो वहीं दूसरी तरफ पिछले दिनों देश के एक प्रतिष्ठित समाचार पत्र में भारत और चीन की आर्थिक तुलना करते हुए संयुक्त राष्ट्र के आंकड़ों का हवाला देते हुए यह बताया गया कि भारत की ८० प्रतिशत जनसंख्या की औसत प्रतिदिन की आय २ अमेरिकी डालर से भी कम यानी लगभग ८० रूपए प्रतिदिन से भी कम है। विकास के दो पहलुओं में ऐसा घोर असंतुलन यूपीए सरकार की अदूरदर्शिता, अक्षमता और असंवेदनशीलता का प्रमाण है।

किसानों पर सिर्फ कर्ज की मार ही नहीं पड़ी है बल्कि देश के अलग-अलग इलाकों में अलग-अलग प्रकार की भीषण समस्यायें किसानों को झेलनी पड़ रही है। पश्चिम बंगाल के सिंगूर और नंदीग्राम में जमीन अधिग्रहण के विवाद पर जिस प्रकार वहां के किसानों का दमन किया गया वह नितांत शर्मनाक और दुर्दांत है। इससे भी कहीं आगे जाकर सीपीएम के कार्यकर्ताओं द्वारा गैरकानूनी तरीके से बल प्रयोग और नंदीग्राम के निवासियों के मध्य आतंक पैदा करके किसानों से जमीन खाली करवाने का प्रयास किया गया। यह स्वयं को सर्वहारा के मसीहा कहने वालों के वास्तविक चरित्र को उजागर करने वाला था। सिंगूर और नंदीग्राम के किसानों पर भी गत वर्ष सबसे पहले प्रतिक्रिया भाजपा ने व्यक्त की।

अन्नदाता कर रहे आत्महत्या

आन्ध्र प्रदेश और महाराष्ट्र में पिछले कुछ वर्षों में किसानों ने हजारों की संख्या में आत्महत्या की। महाराष्ट्र का विदर्भ क्षेत्र तो कई वर्षों से किसानों की कब्रगाह बनता जा रहा है। किसानों की आत्महत्या के सर्वाधिक मामले इस क्षेत्र में हो रहे हैं। प्रदेश और केन्द्र की सरकारें इसका कोई भी समाधान नहीं निकाल पा रही हैं। प्रधानमंत्री का विदर्भ को पैकेज एक भ्रम से अधिक और कुछ सिद्ध नहीं हुआ। इसीलिए भाजपा ने एक बार फिर कदम उठाया और इसी जनवरी माह के १० और ११ तारीख को विदर्भ क्षेत्र में राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री राजनाथ सिंह के नेतृत्व में दो दिन की किसान यात्रा निकली। इस यात्रा में भाजपा ने किसानों की जिस वेदना को अनुभव किया वह निश्चित रूप से हृदय को हिलाने वाली थी। इस यात्रा का अनुभव यह भी रहा कि केन्द्र सरकार के प्रति गांव और गरीब में ऐसा रोष है जिसका अनुमान राजधानी में रहकर नहीं लगाया जा सकता। यह रोष स्वाभाविक था।

अन्नदाता की यह दुर्दशा और वह भी जनता के द्वारा चुनी हुई सरकार के द्वारा हो, एक दुखद विडंबना कही जा सकती है। यूपीए सरकार आज भी इस विडंबना की प्रतीक है। आम आदमी के साथ का दावा करने वालों की पोल खुल चुकी है। अब मुद्दा किसानों की उपेक्षा और तिरस्कार से आगे बढ़कर किसानों के शोषण और अत्याचार तक पहुंच चुका है। विदर्भ और पश्चिम बंगाल इसके ज्वलंत उदाहरण हैं।

इन बातों से पूरी तरह आंखें मूंद कर, कांग्रेस का यह दावा कि भारत दस फीसदी की शानदार विकास दर से प्रगति कर रहा है। क्या कांग्रेस यह सोचती है कि महान और विकसित भारत किसानों की लगातार बढ़ती लाशों के ढेर के बावजूद बन पायेगा। यह असम्भव है। यह भविष्य के लिए और भी गंभीर संकेत है। जिस प्रकार बीसवीं सदी में स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान कांग्रेस ने अपनी गलत नीति के कारण देश के साम्प्रदायिक बंटवारे को स्वीकारा और उसके बाद और सतत् साम्प्रदायिक संघर्ष की नींव रख दी थी उसी प्रकार यदि कुछ और वर्ष कांग्रेस का शासन रहा तो इस देश में आर्थिक विषमता के ऐसे विष बीज पनप जायेंगे कि वे आने वाले समय में अराजक

स्थितियां निर्माण कर सकते हैं।

किसानों का उद्धार कोई राजैनतिक मुद्दा नहीं है। यह केवल एक सामाजिक आवश्यकता ही नहीं बल्कि एक राष्ट्रीय आवश्यकता भी है। कृषि और मानव श्रम को हाशिये पर रख कर किया जाने वाला विकास कितना व्यावहारिक है यह विचारणीय है।

किसानों के लिए ऋण माफी नाकाफी

वित्त वर्ष २००८-०९ के बजट में किसानों के कर्ज माफ करने की घोषणा कर यूपीए सरकार ने पूरे देश को भ्रमित करने का प्रयास किया। यह एक तरह का हमारे अन्नदाताओं के साथ खिलवाड़ है। एक सचाई तो यह है कि देश की दूसरी ओर अभी तक की सबसे बड़ी किसान कर्ज माफी का तात्कालिक फायदा किसानों को जरूर होगा, लेकिन अहम बात यह है कि इस तरह की तीसरी कर्ज माफी की नौबत न आए, उसके लिए सरकार के पास कोई ठोस रणनीति नहीं है। राहत का यह पैकेज किसानों की आय बढ़ाने में दीर्घकालिक नीतियों के दिवालियेपन का सुबूत भी है।

बाकी किसानों का क्या होगा?

कर्ज माफी के इस तोहफे ने कई सवाल भी खड़े किये हैं और उनमें एक सवाल उन किसानों का है जो कर्ज माफी के दायरे में नहीं आये हैं। जब पूरे कृषि क्षेत्र पर संकट है तो बाकी किसानों के लिए सरकार ने कोई खास कदम उठाने में परहेज क्यों बरता है। इस मामले में बजट पेश करते समय विपक्ष द्वारा किये गये हंगामे के दौरान वित्त मंत्री पी. चिदंबरम का एक वाक्य काफी अहम हो जाता है। इस हंगामे में वह कई बार कुलक शब्द का उपयोग कर रहे थे। कुलक यानी वह बड़े किसान जो कमजोर वर्गों की मेहनत पर मौज करते हैं और उनके पास सैकड़ों हेक्टेयर जमीन का मालिकाना हक है। वित्त मंत्री की इस धारणा पर अफसोस ही किया जा सकता है क्योंकि देश में इस समय १० हैक्टेयर से अधिक जोत वाले किसानों की संख्या मात्र १.०२ फीसदी है, जबकि १२.०८ करोड़ किसानों में ७.६१ करोड़ सीमांत किसान हैं जिनकी जोत का औसत आकार ०.४ हेक्टेयर है। इसके बाद लघु किसानों की संख्या २.२८ करोड़ है और उनकी जोत का औसत आकार १.४१ हेक्टेयर हैं इसके बाद आते हैं सेमी मीडियम माने जाने वाले दो से चार हेक्टेयर वाले किसान जिनकी संख्या १.४०

करोड़ और इनकी जोत का औसत आकार २.७२ हेक्टेयर। इसके बाद हैं ६५.६८ लाख मध्यम किसान और उनकी औसत जोत है ५.८ हेक्टेयर। बड़े किसान हैं १२.३० लाख और उनकी औसत जोत है १७.१८ हेक्टेयर। देश के किसानों के इस प्रोफाइल से अंदाजा लगाया जा सकता है कि पैकेज के बाहर रहे किसानों में अधिकांश की माली हालत कैसी होगी। अधिकांश के लिए जोत के ये आकार आर्थिक रूप से व्यवहार्य नहीं है।

इसके साथ हाल ही में जारी वित्तीय समावेश पर भारतीय रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर सी. रंगराजन की अध्यक्षता वाली समिति की रिपोर्ट को नहीं भूलना चाहिए। इसमें कहा गया है कि देश के केवल २७ फीसदी किसान ही संस्थागत वित्तीय संस्थानों तक पहुंच रखते हैं यानी जो किसान ३६ से ४८ फीसदी की ब्याज दर की चक्की में पिस रहे हैं उन किसानों का क्या होगा, इस पर वित्त मंत्री चुप हैं।

कर्ज माफी पैकेज के तहत वित्त मंत्री ने एक हेक्टेयर तक की जोत वाले सीमांत किसानों और एक से दो हेक्टेयर वाले छोटे किसानों का कर्ज माफ किया है। किसानों को सभी सरकारी बैंकों, सहकारी बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों से ३१ मार्च, २००७ तक आवंटित सभी कर्ज माफ कर दिये जाएंगे। ३१, दिसंबर, २००७ तक भुगतान किये जाने वाले इन कर्जों का अगर २९ फरवरी, २००८ तक भुगतान नहीं हो सकता है तो भी यह कर्ज माफी के दायरे में आएंगे। इस पैकेज से सरकार पर ५०,००० करोड़ रूपये का बोझ पड़ेगा। मध्यम और बड़े किसानों को पैकेज से बाहर रखा गया है, लेकिन उनके कर्जों की एकमुश्त निपटान योजना उन्होंने घोषित की है जिसमें भुगतान के एवज में २५ फीसदी की छूट दी जाएगी। इससे सरकार पर १०,००० करोड़ रूपये का बोझ पड़ेगा। कर्ज माफी का कुल पैकेज ६०,००० करोड़ रूपये होगा और इसे जून, २००८ तक लागू कर दिया जाएगा।

पूरा कैसे लागू होगा?

लेकिन पैकेज को वित्त मंत्री जून तक कैसे पूरी तरह लागू कर पाएंगे यह संदेहास्पद है। इसके साथ ही पूरे बजट में कहीं भी इस पैकेज की वित्तीय व्यवस्था का जिक्र नहीं है। अब यह पैसा पूरी तरह से केन्द्र वहन करेगा या फिर बैंकों को भी इसमें से कुछ बोझ उठाना पड़ेगा यह अभी साफ होना बाकी है। यहां एक बात और साफ करने

की जरूरत है। सीमांत और लघु किसानों के लिए बैंकों के पास पहले भी प्रावधान है कि जो किसान मूलधन का ७५ फीसदी तक का भुगतान कर चुके हैं उनके कर्ज को बंद कर दिया जाए, लेकिन अधिकांश बैंक इस कदम पर अमल नहीं करते और न ही सरकार ने पहले इस मुद्दे पर मुस्तैदी दिखाई है। इसके साथ ही वित्त मंत्री ने आगामी साल में कृषि ऋणों के लिए २,८०,००० करोड़ रूपये का प्रावधान किया है। यही नहीं फसल ऋणों पर सात फीसदी की ब्याज दर को बरकरार रखा है। राष्ट्रीय किसान आयोग ने कृषि ऋणों पर चार फीसदी की ब्याज दर की सिफारिश की थी जिस पर अमल नहीं किया गया है।

लेकिन क्या केवल कर्ज माफी ही खेती के संकट का एकमात्र हल है और उसकी आय में बढ़ोतरी न होना अगली कर्ज माफी की जमीन तैयार नहीं करेगा। इस मुद्दे की वित्त मंत्री ने बजट में उपेक्षा की है। यह बात कृषि से संबंधित दूसरे बजट प्रावधानों से साफ हो जाती है। कृषि क्षेत्र के लिए विभिन्न कार्यक्रमों और योजनाओं के तहत उन्होंने २७,१४८ करोड़ रूपये का आवंटन किया है। इसमें किसानों को सात फीसदी पर कर्ज मुहैया कराने के लिए बैंकों को दी जाने वाली १६०० करोड़ रूपये की सब्सिडी भी शामिल है। सिंचाई और जल संसाधन वित्त निगम की घोषणा तक की है लेकिन इसमें सरकारी हिस्सेदारी के रूप में मात्र १०० करोड़ रूपये ही दिये हैं। वर्षापोषित क्षेत्र के लिए मात्र ३४८ करोड़ रूपये और माइक्रो इरीगेशन के लिए ५०० करोड़ रूपये का प्रावधान किया है। राष्ट्रीय बागवानी मिशन के लिए ११०० करोड़ रूपये का प्रावधान किया है।

फसल बीमा योजना के साथ नहीं हुआ न्याय

किसानों को प्राकृतिक आपदा से बचाने के लिए फसल बीमा के लिए मात्र ६४४ करोड़ रूपये उन्होंने आवंटित किये हैं, जबकि इसके लिए योजना में आमूलचूल परिवर्तन की जरूरत बताई जाती रही है जिस पर २७,००० करोड़ रूपये के खर्च की बात आने पर वित्त मंत्री ने किनारा कर लिया।

पहले से घोषित राष्ट्रीय कृषि विकास योजना और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन का जिक्र तो उन्होंने किया लेकिन कृषि क्षेत्र के मात्र १२ फीसदी पर अटके समग्र पूंजी निर्माण को देश के ३६ फीसदी के

करीब कैसे ले जाएंगे, इसका उन्होंने कोई सीधा जवाब बजट में नहीं दिया है।

इस कर्ज माफी से करोड़ों किसानों की तुरंत की समस्या का हल हो जाएगा और उनके ऊपर से कर्ज का बोझ हटेगा लेकिन असली जरूरत उनकी आय में सतत बढ़ोतरी की है।

गांव, गरीब और किसान

यूपीए सरकार के चार वर्ष के कार्यकाल में गांव, गरीब और किसान की स्थिति बद से बदतर हो गई है। गांवों की दुर्दशा इसलिए और भी अधिक चिंताजनक है क्योंकि इस देश का अन्नदाता किसान ही नहीं बल्कि इस देश का रक्षक जवान भी उसी गांव और किसान के परिवारों से आता है। यदि किसान किसी प्रकार विवश होकर खेती से अलग होता रहा तो इस समस्या का एक और आयाम भी हमारे सामने आ सकता है। किसान की दुर्दशा के दूरगामी प्रभाव सिर्फ खाद्यान्न संकट और सामाजिक संतुलन ही नहीं बल्कि एक समय के बाद सेना के लिए प्रतिबद्ध मानव संसाधन की उपलब्धता का संकट भी पैदा कर सकते हैं। जय जवान और जय किसान का नारा सिर्फ तुकबंदी नहीं था बल्कि जवान और किसान के एक स्वाभाविक अंतःसंबंध का प्रतीक था।

गांव- गरीब-किसान और नवयुवक तथा सुरक्षा बलों का जवान, इनकी भावनाओं के समझे बगैर अथवा इनकी उपेक्षा करके कोई राष्ट्र प्रगति के पायदान लगातार तय नहीं कर सकता। केन्द्र की यूपीए सरकार ने इन चार वर्षों में इनकी निरंतर उपेक्षा की है।

किसान भारत की अर्थव्यवस्था का सबसे बड़ा कार्यकारी समूह है, जनसंख्या की दृष्टि से सबसे बड़ा उत्पादक है और सबसे बड़ा उपभोक्ता (ग्राहक) है। बिना किसानों की क्रय शक्ति को बढ़ाये भारत की अर्थव्यवस्था उन्नत नहीं हो सकती।

दिशाहीन शेयर बाजार

शेयर बाजार को देश की अर्थव्यवस्था का संकेतक माना जाता है। यह देश में बढ़ रही संपन्नता का प्रतीक भी माना जाता है परन्तु यह संपन्नता तब तक सर्वव्यापी नहीं हो सकती जब तक छोटे निवेशकों के हितों की सुरक्षा सुनिश्चित न की जा सके। पिछले दिनों तेजी के साथ शेयर बाजार में उथल-पुथल दिखाई पड़ी। पिछले छः महीनों में शेयर

Courtesy : The Asian Age

बाजार का सूचकांक तेजी के साथ १५००० से २१००० तक पहुंचता है और फिर दो-ढाई दिन के अन्दर ३००० अंक नीचे आता है और फिर एक दिन के अन्दर ८५० के उपर जाता है। इस प्रकार का उच्चावचन (fluctuation) छोटे निवेशकों के मन में गहरी आशंकाए पैदा करता है। यूपीए सरकार छोटे निवेशकों के हितों की रक्षा के लिए पूर्णतः सजग नहीं है। भाजपा पहले से यह मांग करती आयी है कि विदेशी संस्थागत निवेशकों का धन और विशेषकर वह धन जो पीएन रूट से आ रहा है उस पर कड़ी नजर रखी जाए परन्तु सरकार ने कोई ध्यान नहीं दिया। सरकार यह जांच करने में विफल रही है कि वे कौन लोग इतनी तेजी से शेयर बाजार को उपर और नीचे ले जाने के पीछे है, उनका उद्देश्य क्या है, इस घटनाक्रम के लाभार्थी कौन है और इस प्रक्रिया में जो छोटे निवेशकों का जो अरबों रूपया डूब गया उसकी भरपाई के लिए सरकार क्या उपाय कर रही है। और भविष्य में ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति न हो और कुछ चुनिन्दा लोग अपनी मर्जी के मुताबिक शेयर बाजार को उपर या नीचे न ले जा सके इसके लिए सरकार को एक सुनिश्चित व्यवस्था बनानी चाहिए।

देश में आतंकवाद की घटनायें बढ़ी हैं। राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार ने यह आशंका व्यक्त की है कि शेयर बाजार में आतंकवादियों का धन आ सकता है। इसलिये यह आवश्यक है कि विदेश से विदेशी संस्थागत निवेशकों (एफ.आई.आई) द्वारा आ रहे धन पर कड़ी नजर रखी जाय। पी.एन. रूट के द्वारा आने वाले धन के संबंध में सरकार द्वारा उठाये गये कदम पर्याप्त नहीं है।

समग्र विकास का खोखला नारा

इस बार ग्यारहवीं योजना का नारा 'समग्र विकास' रखा गया है। समग्र विकास के लिए राष्ट्रीय स्तर पर २७ लक्ष्य रखे गये हैं। इनमें १३ लक्ष्यों को पाने के लिए राज्यों को जिम्मेदारी दी गई है। जबकि स्थिति यह है कि इन लक्ष्यों को पाने में योजना आयोग स्वयं आश्वस्त नहीं है। आयोग का कहना है कि देश का जिस तेजी से विकास हो रहा है उसके हिसाब से गरीबी कम नहीं हो रही है। देश में अनुसूचित जाति-जनजाति और कमजोर वर्गों को विकास का लाभ नहीं मिल रहा है। लिंग भेदभाव अब भी बड़ी समस्या बनी हुई है। निःसन्देह ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के सामने कई चुनौतियां मुंह बाएं खड़ी है।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना की एक सबसे बड़ी चुनौती यह है कि चूंकि देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में ४० फीसदी हिस्सा विदेश व्यापार और विदेशी निवेश का है। अतः अमरीका और पश्चिम के देशों में आगे बढ़ रही आर्थिक मंदी भारत को भी अपनी चपेट में ले सकती है। देश के अर्थ विशेषज्ञ कह रहे हैं कि ग्यारहवीं योजना की कठिन और कटीली डगर के जो लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं उसे प्राप्त करना संभव नहीं है।

आर्थिक कुप्रबंध

यूपीए सरकार ने सत्ता में आने के बाद वायदा किया था कि वह लोगों को और अधिक रोजगार दिलाएगी, निर्धनता मिटायेगी, कीमतें कम करेंगी और आर्थिक सुधारों में तेजी लायेगी परन्तु वह इस सम्पूर्ण काल में इन क्षेत्रों में कोई विशेष प्रगति करने में विफल रही है। डा. मनमोहन सिंह व उसकी टीम की नीतियों से हमारे आर्थिक सिद्धांत बुरी तरह से बदतर होते चले गए हैं।

आर्थिक नीति की विफलता

एनडीए सरकार के शासनकाल में आर्थिक नीति सिर्फ सर्विस सेक्टर, हाउसिंग, आई.टी. और टेलीकॉम जैसे क्षेत्रों में ही भारत को आगे लाने की नहीं थी बल्कि आम आदमी के दैनन्दिन जीवन में प्रयोग होने वाली सभी चीजों में तात्कालिक अटलबिहारी वाजपेयी के

नेतृत्व वाली एनडीए सरकार भारत को अग्रणी स्थान पर खड़ा कर दिया था। एनडीए के शासनकाल में भारत दूध उत्पादन, फल और सब्जी उत्पादन, चाय उत्पादन और जूट उत्पादन में विश्व में पहले नंबर पर आ गया था। गेहूं और चावल उत्पादन में भारत पूर्णतः आत्मनिर्भर होकर विश्व का तीसरा बड़ा उत्पादक बन गया था। ऐसा इसलिए भी था कि एनडीए सरकार ने अर्थव्यवस्था को कृषि से जोड़ने का प्रयास किया था। जबकि आज यूपीए सरकार के कार्यकाल में गेहूं जैसा मूलभूत खाद्यान्न भी आयात करना पड़ रहा है और वह भी ऊंचे दामों पर और निम्न श्रेणी का। इस कारण से भारत में खाद्यान्न को लेकर भी एक असुरक्षा की भावना विकसित हुई है। कृषि रोजगार की दृष्टि से बहुत रोजगारोन्मुख क्षेत्र है जो बड़ी संख्या में मानव संसाधन का समुचित उपयोग कर सकता है। कृषि भारत का सबसे बड़ा इम्पलायमेंट सेक्टर है। इसके विकास के बिना न बेरोजगारी पर नियंत्रण हो सकता है और न महंगाई पर।

यदि एक वाक्य में यह कहा जाय कि इन चार वर्षों में यूपीए सरकार ने भारत को क्या दिया है तो हम कह सकते हैं कि देश की जनता को सिर्फ दो चीजें मिली है- 'असंतुलित समाज' और 'असुरक्षा का एहसास'।

आधारभूत संरचना की योजनाओं की अनदेखी

केन्द्र में एनडीए सरकार के जाने के बाद वर्तमान यूपीए सरकार ने केवल राजनैतिक कारणों से विकास के अनेक कार्य या तो स्थगित कर दिये या उनकी उपेक्षा शुरू कर दी। उदाहरण के लिए भारत में आधारतभूत संरचना के क्षेत्र में मील का पत्थर साबित हुये राष्ट्रीय राजमार्ग परियोजना की गति सरकार बदलते ही बेहद मंद हो गयी। चार महानगरों को जोड़ने वाले स्वर्णिम चतुर्भुज परियोजना का कार्य अब तक पूर्ण हो जाना चाहिए था। देश के लिए हितकारी स्वर्णिम चतुर्भुज, उत्तर-दक्षिण, पूरब-पश्चिम गलियारा और प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क परियोजना जैसे कार्य सत्ता परिवर्तन से अप्रभावित रहने चाहिये।

उच्च स्तर की चिकित्सा सुविधाओं को देश के सभी क्षेत्रों में उपलब्ध कराने के लिये दिल्ली के अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) की तर्ज पर एनडीए सरकार ने ६ अन्य संस्थान खोलने का

निर्णय लिया था। वह योजना ठंडे बस्ते में चली गई।

किसानों को अपनी भूमि के आधार पर एक निश्चित निर्धारित आय प्रदान करवाने के लिए प्रारंभ की गई कृषि आय बीमा योजना रोक दी गई। किसान क्रेडिट कार्ड का कार्य भी ठंडे बस्ते में चला गया। जिन किसानों के पास क्रेडिट कार्ड हैं उन्हें भी क्रेडिट मिलना बंद हो रहा है।

आने वाले समय में भारत में जल की उपलब्धता एक प्रमुख समस्या बन कर आती दिख रही है। इस संभावित जल संकट से निपटने के लिए वर्षा जल के कुशल प्रबंधन की परियोजना और नदियों को जोड़ने की महत्वाकांक्षी परियोजना जिसकी परिकल्पना एनडीए सरकार ने की थी, यूपीए सरकार ने आने के बाद उस पर पर विचार तक नहीं किया गया।

ये सारी योजनायें किसी एक दल के हित के लिए नहीं थी बल्कि संपूर्ण राष्ट्र के आम जनमानस के हित के लिए थी। इनका अनायास बंद होना अथवा धीमा पड़ना एक वैश्विक शक्ति के रूप में उभरते हुये भारत के लिए बहुत समस्याजनक है।

आम आदमी: मूल आवश्यकताओं और सुरक्षा का संकट

आम आदमी के लिए न तो आज भोजन और आवास जैसी मूल आवश्यकताएं सहज और सस्ते रूप में उपलब्ध हैं और न ही उसकी सुरक्षा सुनिश्चित है। आज रोटी महंगी और जान सस्ती हो रही है। यह एक विचित्र विडम्बना है कि विकसित भारत बनने की बातों के बीच एक ऐसा समय भी चल रहा है जब भूख से मौतें हो रही हैं और खाद्यान्न को लेकर दंगे तक हुए। महंगाई ने आम जनता के घर का बजट चौपट कर दिया है। स्थिति की भयावहता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि कल तक एनडीए शासन में अनाजों से भरे रहने वाले गोदामों में आज आस्ट्रेलिया से गेहूं मंगाकर भरे जा रहे हैं। यूपीए की नासमझी और अदूरदर्शिता देश को कहां से कहां ले गई।

दाल-सब्जी-रोटी, फल, दूध, नमक और गैस सभी की कीमतें लगातार बढ़ रही हैं। ऐसा लगता है कि मानो आम आदमी की सुख-शांति पर ग्रहण लग गया हो। किसानों की आत्महत्या बंद होने के बजाए बढ़ ही रही है। यूपीए सरकार के ऐजेण्डे से भारत का अन्नदाता बाहर हो चुका है। किसानों के हित में गत चार वर्षों में

यूपीए ने कोई ऐसा कदम नहीं उठाया, जिससे किसानों की समस्याएं कम हो सके। गरीब-किसानों की बात करने वाले वामपंथी अपनी सत्ता और सुविधा के कारण किसानों की मौत के विरोध में मौन धारण किए हुए है। महंगाई के विरोध में वामपंथी प्रदर्शन तो दूर संसद में मुंह तक नहीं खोलते। यूपीए सरकार में मानव विकास की पोल श्री अर्जुन सेन गुप्ता की एक रिपोर्ट में सामने आयी है। इस रिपोर्ट में श्री गुप्ता ने कहा है कि भारत में ७७ प्रतिशत के करीब नागरिकों की जिंदगी बहुत कठिन परिस्थितियों में है। इनमें से बहुत सारे बीस रूपये रोज ही कमा पाते हैं। आर्थिक विषमता का यह दौर हमारे लिए खतरे की घंटी है।

असंतुलित विकास

यूपीए सरकार में अर्थव्यवस्था में भारी असंतुलन है। देश की लगभग ७० फीसदी आबादी कृषि पर निर्भर है, जबकि इकॉनोमिक सर्वे २००६-०७ के अनुसार कृषि का सकल घरेलू उत्पाद में मात्र १८.५ प्रतिशत की हिस्सेदारी है। यानि बहुसंख्यक आबादी का जीडीपी में योगदान महज १८.५ प्रतिशत है। इससे स्पष्ट है कि देश की बहुसंख्यक ७० प्रतिशत की आर्थिक हालत बहुत खराब है।

देश में इस समय ३६ करोड़ श्रमशक्ति है। जिसमें २२.५ करोड़ कृषि क्षेत्र में, ५ करोड़ उद्योग एवं १०.५ करोड़ सेवा क्षेत्र में लगी हुई है। इन आंकड़ों से भी स्पष्ट है कि देश की आधी से अधिक श्रम-शक्ति का उत्पादन न्यूनतम है।

हमारे यहां भुखमरी बढ़ी है। आधिकारिक आंकड़े यह बताते है कि गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों की संख्या कागजों में घटी है पर वास्तविकता में बढ़ी है। वहीं इस बात के भी प्रमाण हैं कि पिछले तीन-चार वर्षों में हमारे देश में भुखमरी बढ़ी है।

मनमोहन और सीपीएम की नीतियों में अंतर

कम्युनिस्ट पार्टियां हमेशा आर्थिक नीतियों पर हावी रही हैं चाहे सरकारी उपक्रमों में विनिवेश की बात हो, हवाई अड्डों का आधुनिकीकरण हो, पेंशन फंड अथोरिटी के गठन की बात हो, बैंकिग सेक्टर के पुनर्विन्यास और सरकारी बैंकों के एकीकरण, रिटेल में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, ईपीएफ दर, डब्ल्यूटीओ से सम्बधित जो भी बात हो, हमें कैबिनेट के निर्णयों में अजीब नजारा दिखाई पड़ता है। क्योंकि उन्हें

कम्युनिस्टों और विपक्ष के दबाव के कारण ठंडे बस्ते में डालना पड़ जाता है। लाचार प्रधानमंत्री अच्छे अर्थशास्त्र के बारे में भाषण देते हैं परन्तु कम्युनिस्टों के कहने पर उन्हें अपनी नीतियां छोड़नी पड़ जाती हैं। लोगों को यह भी मालूम होना चाहिए कि कांग्रेस पार्टी ने कभी भी आर्थिक सुधारों में विश्वास नहीं किया है। सच तो यह है कि वह हमेशा परमिट और लाईसेंस राज की नीति पर चलती रही है और उसने उद्यमों और संस्थाओं के भ्रष्टाचार को आगे बढ़ाया है। आज वह अपने ही बुने जाल में फंस गई है।

कथनी और करनी में भेद, केन्द्र सरकार द्वारा आर्थिक सुधारों को जारी रखने में अपनी असमर्थता और भारत के लोगों की छिपी शक्ति का लाभ उठाने में असमर्थता के कारण राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को बुरी तरह प्रभावित किया है जिसके कारण भारत के लोगों की छवि खराब हुई है तथा गरीबी के प्रति लड़ाई नहीं लड़ी जा सकी है।

वामपंथियों के गहरे प्रभाव और दखलंदाजी के चलते यूपीए सरकार भेल आदि जैसे सरकारी उद्यमों में विनिवेश के अपने ही निर्णयों को कार्यान्वित नहीं कर पा रही है। इस स्थिति के कारण विदेशी निवेशकों के मन में आशंकाए पैदा हो रही है और देश की अर्थव्यवस्था पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है।

खुदरा क्षेत्र पर प्रत्यक्ष विदेशी निवेश से बेरोजगारी बढेगी

यूपीए ने खुदरा क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की शुरूआत करने का निर्णय लिया है, जो एक ऐसा उपाय होगा जिससे छोटे व्यापारी तथा विक्रेता बेरोजगार हो जाएंगे तथा आम व्यापारी का जीवन दुखी बन कर रह जाएगा। प्रारम्भिक अनुमानों के अनुसार इस उपाय से खुदरा व्यापार में लगे ४ करोड़ लोग बेरोजगार हो चुके हैं। इससे यूपीए सरकार के इरादों का पर्दाफाश हो जाता है क्योंकि कहने को तो इसमें बेरोजगारों को रोजगार दिलाने की बात कही गई है, परन्तु पहले ही रोजगार युक्त लोग बेरोजगार हो रहे हैं। इससे स्वरोजगार वाले लोगों की संख्या बढ़कर बेरोजगारों की श्रेणी में शामिल हो जाएंगी। इस योजना से निम्नलिखित विपरीत प्रभाव पड़ेंगेः-

- इससे छोटे-छोटे स्टोर खत्म हो जाएंगे क्योंकि वे सुपर मार्केट द्वारा दी गई सेवाओं, उनके मानकों से मैच नहीं कर पाएंगे।

- स्पष्ट ही असंगठित क्षेत्रों में भी खुदरा बाजारों का स्थान समाप्त हो जाएगा।
- इससे प्रतिस्पर्धी मूल्यों की शुरूआत होने लगेगी जिससे बहुत से घरेलू दुकानदार समाप्त हो जाएंगे।
- इससे थाईलैण्ड की तरह ही बेरोजगार के अवसर कम हो जाएंगे क्योंकि असंगठित क्षेत्रों में छोटे खुदरा व्यापारियों का स्थान समाप्त हो जाएगा।
- इससे बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की रिटेल चेन की पूर्व दिनांकित प्रक्रिया वैध बन जाएगी।
- इससे विदेशी संस्कृति के मानकीकृत रूप को बढ़ावा मिलेगा।
- इससे बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का आयात बढ़ता जाएगा और वे भारत में अपने उत्पादों का ढेर लगा देंगी।
- क्योंकि रिटेल में बहुत मामूली निवेश की जरूरत होती है, इसलिए विदेशी व्यापारी देश से बाहर अपने लाभ अपने देश को भेजते रहेंगे।

बचत और पूंजी बाजार

बचत और अर्थव्यवस्था स्थिर पड़ी हुई है क्योंकि दीर्घकालीन बैंक जमा राशियों से भी वास्तविक लाभ का पता नहीं चल पा रहा है। इसका कारण यह है कि सरकार अर्थव्यवस्था की सभी बचतों पर एकाधिकार प्राप्त करती जा रही है। राजकोषीय उत्तरदायित्व में जो समय सीमा ला दी गई हैं उस पर नहीं चला जा रहा है। अर्थव्यवस्था में इस प्रवृत्ति को रोकने की आवश्यकता हैं और राजकोषीय बुद्धिमत्ता दिखाना जरूरी है। इससे ही लोगों को बचत करने का प्रोत्साहन मिलेगा।

यूपीए सरकार दावा करती रहती है कि बाजार स्वस्थ हालत में हैं क्योंकि शेयरों की कीमत बढ़ती जा रही है जबकि तथ्य इसके उलट हैं अब स्टॉक मार्किट पूरी तरह से विदेशी संस्थागत निवेशकों के हाथों में है। ये हर भारतीय के लिए चिंता का विषय है इससे भी बढ़कर चिंता का विषय है की भारतीय रिजर्व बैंक ने इस बात की चेतावनी दी है कि कुछ बेईमान तत्वों द्वारा एफआईआई के माध्यमों से जो

फायदा उठाया जा रहा है वह खतरनाक है। यह बात तब भी हो रही है जबकि पिछले स्टाक स्कैम पर गठित जेपीसी ने ऐसे तात्कालिक उपाय करने की सिफारिश की थी कि एफआईआई संस्थाओं को अवैध धन का उपयोग करने से रोका जाए।

गरीबी हटाओ नारा मात्र छलावा

आज से ३६ वर्ष पूर्व कांग्रेस ने गरीबी हटाओ का नारा दिया था। इन ३६ वर्षों में से २४-२५ वर्षों तक कांग्रेस के शासन के बावजूद गरीबी आज भी विकराल समस्या के रुप में विद्यमान है। आज फिर उसी नारे के सहारे राजनीति चमकाने का प्रयास हो रहा है। कांग्रेस के लिए 'गरीबी हटाओ' सिर्फ नारा ही है, क्योंकि उसे गरीबों के हित से कोई लेना देना नहीं है। संप्रग सरकार की गलत नीतियों के कारण विकास में असंतुलन के चलते आर्थिक असमानता का फासला निरंतर बढ़ रहा है। अभी भी देश की २८ प्रतिशत से अधिक जनता गरीबी की रेखा के नीचे है।

जनता का सपना चकनाचूर

यूपीए सरकार के शासन में लोगों को बुनियादी सुविधाएं भी नहीं मिल पा रही हैं। देश की अधिकांश आबादी के लिए आज अपना मकान बनाना एक सपना जैसा हो गया है। यूपीए सरकार ने जनता के सपने को चकनाचूर कर दिया है। एनडीए सरकार के समय होम लोन का दर जहां ७-८ प्रतिशत था वहीं कांग्रेसनीत यूपीए सरकार के शासन में यह बढ़कर १२.७५ प्रतिशत हो गया है। इस सरकार की नीतियों से लोगों का जीवन मुश्किल हो गया है।

अप्राकृतिक गठबंधन

यूपीए गठबंधन के बारे में प्रारंभ में कहा जाता था कि यह एक अप्राकृतिक गठबंधन है। यूपीए गठबंधन का एकमात्र राजनीतिक उद्देश्य था 'भारतीय जनता पार्टी को सत्ता में नहीं आने देना।'

वामपंथी दल मीडिया के सामने केंद्र सरकार की जितनी तीखी आलोचना करते हैं अंदर ही अंदर उतनी गर्मजोशी के साथ कांग्रेस से हाथ मिलाये रहते हैं। दरअसल, कांग्रेस और वामपंथी दल इस नूराकुश्ती के माध्यम से जनता को भ्रमित करना चाहते हैं।

देश की जनता बहुत प्रबुद्ध है, अब वह इन चालों को अच्छी तरह समझ चुकी है। संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की सरकार में न तो कुछ प्रगति दिखाई पड़ रही है और न ही कुछ संयुक्त दिखाई पड़ रहा है। यह विभक्त और प्रगतिहीन गठबंधन का नमूना बन कर रह गया है। यूपीए गठबंधन को जनता का विश्वास तो मिला ही नहीं था, चुनाव के बाद गठबंधन के गुणाभाग से उन्होंने जो कृत्रिम विश्वास पाया भी था उसका भी मान रखने में यह सरकार सफल नहीं रही।

पारस्परिक विश्वास के साथ सामंजस्य बनाते हुए गठबंधन चलाना आसान नहीं होता। भारतीय जनता पार्टी ने 'गठबंधन का दायित्व' एनडीए की सरकार में जिस तरह निभाया है और वर्तमान में कई राज्यों में निभा रही है, वह भारतीय राजनीति के लिए आदर्श बन चुका है। केंद्र के साथ-साथ राज्य स्तर पर महाराष्ट्र में शिवसेना के साथ दो दशकों से अधिक, पंजाब में अकाली दल, बिहार में जनता दल (यू) के साथ एक दशक से अधिक और उड़ीसा में बीजू जनता दल के साथ ६ वर्षों से हमारा गठबंधन सफलता के साथ चल रहा है। ये सभी गठबंधन भारतीय राजनीति के सबसे स्थायी गठबंधनों में से एक है।

लोकतंत्र में जनता सर्वोपरि होती है। यूपीए सरकार के खिलाफ लोग एकजुट हो रहे हैं। देश में इस गठबंधन एवं सरकार के विरूद्ध वातावरण बन चुका है।

यूपीए में बिखराव

यदि यूपीए को संयुक्त मानकर चला जाए तो हमें इस 'संयुक्त' की परिभाषा ही पूरी तरह से बदल देनी होगी। यदि जो कुछ कांग्रेस, बहुजन समाजवादी पार्टी, राष्ट्रीय जनता दल, लोक जनशक्ति पार्टी, राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी या वामपंथी पार्टियां जिस ढंग से खुलेआम एक दूसरे के खिलाफ बोलते हैं, ऐसी स्थिति में किसी को भी यह शक हो सकता है कि ये यूपीए के भाग हैं अथवा एक दूसरे के विरोधी है। वैसे भी इस गठबंधन की नींव ही मौकापरस्ती पर आधारित है। हर दल

अपने-अपने हितों को साधने में लगा है।

कांग्रेसनीत यूपीए को देश की जनता पूरी तरह नकार चुकी है। यूपीए व्यावहारिक रूप से संसद में बहुमत खो चुकी है क्योंकि उसके अनेक सहयोगी उससे अलग हो गए हैं और ऐसे दल (वामपंथी) जिनके समर्थन से यह सरकार चल रही है वह भी खुलेआम सरकार का विरोध कर रहे हैं। विगत चुनाव परिणाम और राजनीतिक घटनाक्रमों का संकेत देखें तो यूपीए सरकार अब जनमत भी खो चुकी है।

कांग्रेस ने पिछले चार वर्षों के अपने यूपीए गठबंधन के शासनकाल के दौरान छह राज्यों में अपनी सरकारें खोई हैं। वहीं उसके घटक दल राजद (लालू) बिहार में सत्ता खो चुका है। तेलंगाना ने समर्थन वापस ले लिया। श्री वाइको की पार्टी ने भी यूपीए का साथ छोड़ दिया। लोकदल ने भी पल्ला झाड़ लिया। बसपा और कांग्रेस में तकनीकी दृष्टि से समर्थन प्राप्त होने के बावजूद वास्तविक स्थिति यह है कि दोनों एक-दूसरे के विरूद्ध सार्वजनिक रूप से आरोप और प्रत्यारोप कर रहे हैं। वहीं वामपंथी, जो यूपीए को बाहर से समर्थन दे रहे हैं, उनका सरकार के प्रति व्यवहार जगजाहिर है। अतः यह स्पष्ट है कि इन चार वर्षों में कांग्रेस ने देश की जनता और अपने सहयोगी दल दोनों का विश्वास खोया है।

यूपीए और वामपंथियोके बीच विचित्र सम्बंध

इससे भी विचित्र बात कम्युनिस्ट पार्टियों की है जो बाहर से मनमोहन सरकार को समर्थन दे रही है। अब चाहे बात पेट्रोल, डीजल, रसोई गैस, बिजली, पानी की दरों में बढ़ोतरी की हो अथवा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की हो अथवा सरकारी उद्योगों के विनिवेश की हो वामपंथी प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में जमकर विरोध करते हैं परंतु अन्दर जाकर समझौता कर लेते हैं। उन्होंने हवाई अड्डों के निजीकरण को लेकर यूपीए सरकार के खिलाफ पूरे भारत में हड़ताल का आयोजन भी किया। जैसे ही वे यूपीए की नीतियों के खिलाफ उसकी भर्त्सना करते हुए गर्म होते हैं तुरंत ही प्रधानमंत्री या कांग्रेस अध्यक्षा श्रीमती सोनिया गांधी उन्हें लंच, डिनर या ब्रेकफास्ट पर आमंत्रित कर लेती है और वे इन स्वादिष्ट व्यंजनों का मजा लेते हुए आम आदमी की दुर्दशा को भूल जाते हैं और संतुष्ट होकर अपना लाल झंडा हिलाते

हुए इन बैठकों से बाहर आ जाते है। वे स्वादिष्ट भोजन खाने के बाद मनमोहन सरकार के आगे झुक जाते हैं परंतु बाहर आकर सिर्फ राजनीति में खड़ा रहने के लिए अपनी लाचारी का ढोंग रचते है।

वरना वे अपने इस प्रकार के विरोधाभासी व्यवहार को कैसे किसी को समझा सकते है। प्रमुख सीपीएम नेता ने कहा है कि यूपीए सरकार को हमारा समर्थन मानकर नहीं चलना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा है कि हम केवल भौंकते नहीं हैं बल्कि काट भी सकते है। परंतु हर महत्वपूर्ण विषय पर जिससे आम आदमी आहत होता है, वामपंथी कभी यूपीए सरकार को काटने की जुर्रत नहीं कर पाते हैं। अब तो ऐसा लगता है कि या तो उनका भौंकना मात्र दिखावटी है या वे जानते ही नहीं काटना होता क्या है। हालांकि उनको हर विषय पर बहुत धमकाया भी जाता है और उन्हें चुनौती भी दी जाती है। अब तो ऐसा लगता है कि उनके पास काटने वाले दांत है ही नहीं सब टूटे पड़े है।

गठबंधन नहीं, बल्कि एक सर्कस

यूपीए और कम्युनिस्ट गठबंधन राजनीति का विचित्र दर्शन पेश कर रहे हैं इसमें विचारों की और क्रियाओं की एकता की बजाय सिर्फ द्वंद और विरोधाभास है। हर दिन मीडिया में रिपोर्टें आती रहती हैं कि वामपंथियों का कोई न कोई घटक सरकार पर न्यूनतम साझा कार्यक्रम से अलग जाता दिखायी पड़ रहा है। यहां तो विचारों की मत-भिन्नता सहमति से कहीं अलग दिखाई पड़ती है। वामपंथी दल यूपीए सरकार का समर्थन तो करती है परंतु यह उसकी मजबूरी है और इसके पीछे कोई राजनैतिक सोच नहीं है।

इससे वामपंथी पार्टियों की राजनैतिक विचारधारा का, उसकी सोच का और उसके सिद्धांतों का बहुत कुछ पता चल जाता है। सच तो यह है कि उसकी कोई सोच है ही नहीं, वह तो सिर्फ अल्पकालीन रणनीति पर चल रही हैं ताकि वे अपने संकीर्ण स्वार्थपूर्ण एजेंडा और निहित हितों को साध सकें।

यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि कुछ लोग मनमोहन सरकार को एक गठबंधन की सरकार नहीं कहते है बल्कि इसे सर्कस का नाम देते हैं जिसके बहुत से जोकर हैं बल्कि देखा जाये तो यूपीए सर्कस भी नहीं है क्योंकि सर्कस में भी बहुत से पात्र होते हैं जो कम से कम

किसी एक के निर्देशन में तो चलते ही हैं। परन्तु यह बात यूपीए के मामले में सही नहीं उतरती है।

प्रधानमंत्री का अपनी सरकार पर कोई वश नहीं

हमारी संसदीय शासन व्यवस्था में प्रधानमंत्री को सरकार का सर्वोपरि माना जाता है। जिसके पास राजनीतिक और प्रशासनिक दोनों अधिकार होते हैं। भारत का प्रधानमंत्री ऐसा नहीं होता है, जैसे कि वह किसी भारतीय कम्पनी का कोई प्रमुख निदेशक हो, वह अपनी राजनैतिक अधिकारों को किसी अन्य व्यक्ति को नहीं सौंप सकता है। आज देश पर एक ऐसी असंवैधानिक व्यवस्था लाद दी गई है कि प्रधानमंत्री के पास अपनी ही सरकार को नियंत्रण में रखने के अधिकार नहीं है और वह हर महत्वपूर्ण मुद्दे पर संसद की बजाय अपने बॉस के प्रति अधिक उत्तरदायी बना रहता है।

डा. मनमोहन सिंह की एक और दुर्बलता है कि उसके मंत्रीगण किसी महत्वपूर्ण नीतिगत मामले की घोषणा करने से पहले उन्हें विश्वास में नहीं लेते हैं। बहुत से ऐसे अवसर आए हैं कि प्रधानमंत्री के लिए कोई नीति उनके पास एक खबर बनकर पहुंची है जो उन्हें समाचार पत्रों अथवा इलैक्ट्रोनिक मीडिया से मिलती है। इसी कारण उन्हें अपने मंत्रियों को लिखना पड़ा कि वे इस प्रकार की सभी नीतिगत घोषणाओं के लिए प्रधानमंत्री कार्यालय से अपना सम्पर्क बनाए रखें।

कांग्रेस को जनता ने नकारा

सन् २००४-२००८ के बीच २४ राज्यों के विधानसभा चुनाव संपन्न हुए : महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक (२००४), उड़ीसा, सिक्किम, हरियाणा, झारखंड, बिहार, पं. बंगाल, तमिलनाडु, पांडिचेरी, केरल, असम, उत्तराखंड, पंजाब, मणिपुर, उत्तर प्रदेश, गोवा, हिमाचल प्रदेश, गुजरात, त्रिपुरा, मेघालय और कर्नाटक (२००८)। इनमें से कांग्रेस को १७ राज्यों में पराजय का मुंह देखना पड़ा। वहीं ६ राज्य वे हैं जहां कांग्रेस को अपनी सत्ता गंवानी पड़ी।

गुजरात और हिमाचल प्रदेश में मिली करारी हार से परेशान

कांग्रेस को पूर्वोत्तर राज्यों के विधानसभा चुनाव के नतीजों से भी करारा झटका लगा है। हाल ही में संपन्न नगालैण्ड और मेघालय विधानसभा चुनाव में भाजपा समर्थित डेमोक्रेटिक एलायंस ऑफ नगालैंड और मेघालय प्रगतिशील गठबंधन की सरकार बनी।

पंजाब, उत्तराखंड, गुजरात और हिमाचल प्रदेश में कांग्रेस के मंसूबों को धूल धूसरित करते हुए जनता ने भाजपा का कमल खिलाया। गुजरात में भारतीय जनता पार्टी की तीसरी बार विजय ने दूरगामी महत्व का सन्देश दिया है।

गुजरात में चुनाव-प्रचार के दौरान कांग्रेस अध्यक्षा ने ओछे हथकंडे अपनाते हुए श्री नरेंद्र मोदी को 'मौत का सौदागर' बताया। गुजरात के लोगों ने इस प्रकार की जहरीली राजनीति करने वाले लोगों को कड़ा उत्तर दिया। कांग्रेस को आत्ममंथन करते हुए गुजरात में अपनी हार से सही सबक लेना चाहिए।

हाल ही में कर्नाटक विधानसभा चुनाव में भाजपा ने शानदार जीत हासिल की। यह जीत कई मायनों में ऐतिहासिक है। दक्षिण में भाजपा की जीत ने उन राजनीतिक दलों का मुंह बंद कर दिया है जो आए दिन भाजपा को उत्तर भारत की पार्टी बताते नहीं थकते थे। भाजपा अब अखिल भारतीय पार्टी बन गई है। गत चार वर्षों में यह साफ तौर पर उभर कर सामने आया है कि जनता छद्म धर्मनिरपेक्ष ताकतों को तेजी से नकार रही है वहीं राष्ट्रवादी विचारधारा के रूप में भाजपा को स्वीकार रही है। कांग्रेसनीत यूपीए सरकार के कुशासन के चलते लोगों का तेजी से कांग्रेस से मोह भंग हो रहा है।

संप्रग सरकार का अधिनायकवादी रवैया

संप्रग सरकार अभी तक अधिनायकवादी रवैए से कार्य कर रही है। राष्ट्रीय महत्व के मुद्दे पर वह आम सहमति बनाने का न तो प्रयास किया और न ही विपक्ष के साथ-साथ अपने सहयोगी दलों को विश्वास में लिया। मामला अमेरिका के साथ परमाणु समझौते का हो या अरूणाचल प्रदेश में चीनी घुसपैठ का। दोनों मसलों पर संप्रग सरकार अपनी बात रखने में सफल नहीं हुई। केंद्र सरकार ने अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर आतंकवाद को प्रभावी ढंग से नहीं उठाया। आईएमडीटी एक्ट पर सुप्रीम कोर्ट के आदेशों के बाद भी बंगलादेशी घुसपैठ के मामले में यूपीए सरकार पूरी तरह निष्क्रिय रही। संप्रग

सरकार की कमजोर नीति के चलते नेपाल में राजनीतिक संकट गहराया।

महिला आरक्षण

यूपीए सरकार के चार वर्ष पूरे होने के पश्चात् भी महिलाओं को ३३ प्रतिशत आरक्षण सुनिश्चित नहीं हो सका। वास्तव में महिला विरोधी यूपीए सरकार महिलाओं को आरक्षण का लाभ देना ही नहीं चाहती। चौथे वर्ष के इस बजट सत्र के दौरान यूपीए ने महिला आरक्षण को लोकसभा के स्थगित होने के पश्चात राज्यसभा के अंतिम कार्यदिवस में बड़े ही नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया। जिसका उसके ही सहयोगी दलों ने जमकर विरोध किया व बिल फाड़ कर फेंक दिया। यह दर्शाता है कि यूपीए सरकार इस बिल को लेकर महज खानापूर्ति कर रही है। वह महिलाओं को ३३ प्रतिशत आरक्षण देने के लिए गंभीर नहीं है।

भारतीय जनता पार्टी जो कहती है वह करती है। भाजपा ने महिला आरक्षण की प्रतिबद्धता को दोहराते हुए अपने संगठन स्तर पर महिलाओं को ३३ प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया है और पिछले दिनों अपनी इकाई गठन के दौरान इसे साकार भी किया।

भाजपा इस देश की पहली राजनीतिक पार्टी बन गई जिसने अपने संगठन में महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण को वास्तविक स्वरूप प्रदान किया। निश्चित रूप से यह कदम सिर्फ भाजपा ही नहीं बल्कि संपूर्ण भारतीय राजनीति के लिए एक युगांतकारी कदम सिद्ध होगा जिसके प्रभाव आने वाले वर्षों में जनता को और स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ेंगे।

तेलंगाना के साथ धोखा

आंध्र प्रदेश विधानसभा चुनाव के दौरान कांग्रेस और तेलंगाना राष्ट्रीय समिति ने तेलंगाना राज्य गठन के मुद्दे पर चुनावी गठबंधन किया था कि यदि वे विजयी होते हैं तो वे आंध्रप्रदेश के वर्तमान राज्य को बांट कर एक संपूर्ण तेलंगाना राज्य बना देंगे। दोनों पार्टियां विधानसभा चुनाव में विजयी रहे परंतु कांग्रेस ने लोगों के जनादेश के साथ विश्वासघात किया और कांग्रेस ने अपने इस वायदे को नहीं निभाया। आंध्र के लोगों को मूर्ख बनाने के लिए यूपीए ने रक्षा मंत्री श्री प्रणव मुखर्जी की अध्यक्षता में इस विषय पर एक समिति गठित

कर दी है। समिति और यूपीए सरकार जैसे-तैसे समय काट रही हैं। हताश होकर तेलंगाना राष्ट्रीय समिति केंद्र और आंध्र सरकार की कैबिनेट दोनों से अपने इन बुनियादी नीतिगत मतभेदों के कारण बाहर निकल आयी।

यूपीए द्वारा संवैधानिक संस्थाओं का अवमूल्यन

अपने शासन के चार वर्ष में यूपीए सरकार ने जिस ढंग से लोकतांत्रिक संस्थानों, मानकों तथा स्तरों को क्षति पहुंचाई है, वैसी क्षति स्वतंत्र भारत के इतिहास में किसी अन्य सरकार ने नहीं पहुंचाई। इस असैद्धांतिक तथा अवसरवादी गठबंधन का कमजोर और कृत्रिम चरित्र पिछले चार वर्षों की घटनाओं से पता चल जाता है। न्यूनतम राष्ट्रीय साझा कार्यक्रम कागजी दीवार जैसा है जो दीवार की दरारों को ढकने में विफल रहा है।

सोनिया की नवीन चावला पर कृपा दृष्टि

निर्वाचन आयुक्त नवीन चावला को यह पद सिर्फ गांधी परिवार की पीढ़ियों से चली आ रही मेहरबानियों के कारण मिला जो कि स्वर्गीय श्रीमती इंदिरा गांधी से लेकर चली आ रही है। जीवनपर्यन्त श्री चावला ने गांधी परिवार के प्रति सर्वोपरि निष्ठा जताई है। आपातकाल के अंधकार युग में गवर्नर जनरल के हुकुम की बजाय उनके निजी सचिव श्री चावला का हुकुम ही चलता था। शाह कमीशन ने आपात्काल के दौरान की गई ज्यादतियों की जांच करते हुए इस पर टिप्पणी करते हुए लिखा था कि श्री चावला का काम करने का ढंग इस प्रकार का था कि ''लेफ्टिनेंट गवर्नर सिर्फ लेफ्टिनेंट बन कर रह गया था और प्राइवेट सेक्रेटरी गवर्नर बन गया था।''

श्री चावला की निर्वाचन आयुक्त के रूप में नियुक्ति से पहले कांग्रेस सांसदों के सांसद निधि से श्रीमती चावला द्वारा तथा स्वयं उनके अपने

नाम पर संचालित ट्रस्ट के लिए लाखों रूपए प्राप्त किए गए। श्री नवीन चावला एक प्रतिष्ठित पद पर है, जिससे देश के प्रत्येक व्यक्ति को उन पर विश्वास तथा भरोसा रहना चाहिए क्योंकि उन्हीं की निगरानी में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव होने हैं। परन्तु जिस प्रकार की नवीन चावला की पृष्ठभूमि है और उनकी कांग्रेस तथा गांधी परिवार के प्रति जैसी निष्ठा है, उससे उनकी विश्वसनीयता प्रश्न के घेरे में है। फिर भी वे गांधी परिवार की मेहरबानियों के कारण विराजमान हैं।

भाजपा-नीत एनडीए ने श्री चावला के खिलाफ कार्रवाई की मांग की है और २०६ सांसदों ने राष्ट्रपति से श्री चावला को निर्वाचन आयुक्त के पद से हटाने की मांग की है। संविधान के अनुच्छेद ३२४ (५) के अन्तर्गत महामहिम राष्ट्रपति ने प्रधानमंत्री के पास इस ज्ञापन को भेजा। जबकि कानून के प्रावधान और प्रक्रिया को जानते हुए उनके लिए बाध्यकारी था कि वे इसे मुख्य निर्वाचन आयुक्त को भेजते, जो इस मामले पर विचार करते और राष्ट्रपति को अपनी सिफारिश करते। वैसा करने की बजाए श्री नवीन चावला को बचाने के लिए, जिन्हें १० जनपथ का प्रश्रय प्राप्त है, कानून के प्रावधानों तथा प्रक्रिया के खिलाफ अटार्नी-जनरल की राय मांगी गई क्योंकि इस विषय में अटार्नी जनरल की कहीं कोई भूमिका है ही नहीं। अटार्नी-जनरल ने श्री चावला को क्लीन चिट दे दी।

अब लगता है कि सरकार का प्रयास श्री नवीन चावला को क्लीन चिट देने और उसे बचाने का है। भला, मनमोहन सरकार ऐसा क्यों नहीं करेगी, जबकि उसे मालूम है कि श्री चावला के सम्बन्ध १० जनपथ के साथ बहुत गहरे हैं?

राज्यपालों को हटाने का षड्यंत्र

स्थापित प्रक्रिया के खिलाफ जाकर यूपीए ने एनडीए सरकार द्वारा नियुक्त सभी राज्यपालों को हटा दिया। सच तो यह है कि कांग्रेस ने एक सोची समझी चाल के अन्तर्गत ऐसा किया। उसने पुराने राज्यपालों को हटा कर यह प्रयास किया कि ऐसे राज्यपालों को नामित किया जाए जो कांग्रेस के कहे अनुसार ही काम करें। बाद की घटनाओं ने इस बात को सिद्ध भी कर दिया है। गोवा में सरकार द्वारा विधानसभा में विश्वास मत प्राप्त करने के बाद कुछ ही मिनटों में भाजपा सरकार को बर्खास्त किया जाना, झारखण्ड में शिबू सोरेन को शपथ दिलाना,

जिनके पास कभी बहुमत था ही नहीं और बिहार विधानसभा को भंग करने के उदाहरण हमारे सामने हैं। बाद में देश के सर्वोच्च न्यायालय ने यूपीए सरकार की कार्रवाई को 'असंवैधानिक' ठहराया।

यूपीए ने एनडीए सरकार द्वारा अपने निहित स्वार्थों के कारण विभिन्न बोर्डों तथा कार्पोरेशनों के चेयरमैनों तथा निदेशकों को भी हटा दिया। इनमें से एनसीईआरटी के निदेशक को हटाना मुख्यतः उल्लेखनीय है। कुछ और उदाहरण दें तो उनमें फिल्म सेंसर बोर्ड, बाल फिल्म सोसाइटी, इण्डियन इंस्टीट्यूट आफ एडवांस्ड स्टडीज के निदेशक आदि के नाम शामिल है। विकलांग लोगों के लाभ के लिए स्थापित कमीशन को भी समाप्त कर दिया गया।

न्यायालयों के प्रति असम्मान

जिस प्रकार से कांग्रेस ने खुलेआम श्री शिबू सोरेन, श्री जय प्रकाश नारायण यादव, श्री शहाबुद्दीन और कई अन्य व्यक्तियों की रक्षा करने के लिए सरकारी प्रशासन का दुरूपयोग किया है उसे सारे देश ने देखा है। कांग्रेस ने अल्पसंख्यक आरक्षण पर उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के निर्णयों का विरोध किया है। उच्चतम न्यायालय निर्वाचन आयोग और उच्च न्यायालयों जैसी संवैधानिक संस्थाओं के बारे में वरिष्ठ कांग्रेसी नेताओं की खुलेआम आलोचनाओं से पूरे देश को आघात पहुंचा है।

गैर संवैधानिक रूप से बिहार विधानसभा भंग

राज्यपाल श्री बूटासिंह की सिफारिश पर मनमोहन सरकार ने बिहार विधानसभा को भंग कर दिया। उनकी रिपोर्ट पर विचार करने के लिए ठीक आधी रात को कैबिनेट की मीटिंग बुलाई गई और सिफारिश को रूस के सरकारी दौरे पर गए राष्ट्रपति को तुरंत अपनी स्वीकृति करने के लिए फैक्स किया गया। प्रधानमंत्री ने राष्ट्रपति से बात की और उनकी स्वीकृति प्राप्त कर ली तथा इस बारे में सवेरे साढ़े तीन बजे अधिसूचना जारी कर दी गई। इसके पीछे एकमात्र प्रयोजन इतना था कि श्री नीतिश कुमार के नेतृत्व में एनडीए सरकार बनाने का दावा पेश न कर सके। ये सब कुछ उनके सुप्रीम लीडर की हिदायत के अनुसार किया गया। पटना में आम लोगों ने हताश होकर कहा कि ''यह राष्ट्रपति राज नहीं बल्कि बिहार में राबड़ीपति राज है''

उच्चतम न्यायालय ने मनमोहन सरकार के इस निर्णय को ''असंवैधानिक करार दिया'' और यूपीए सरकार के कामकाज पर भर्त्सनापूर्ण टिप्पणी दी कि क्योंकि केन्द्रीय मंत्रिपरिषद राज्यपाल की रिपोर्ट से हुए गलत कार्यों से अपने को मुक्त नहीं कर सकती है, राज्यपाल की रिपोर्ट पर विचार करना उसकी ड्यूटी थी। वह राज्यपाल द्वारा पेश रिपोर्ट को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं थी। इसके बाद भी केन्द्र सरकार ने राज्यपाल को चलता नहीं किया, बल्कि बिहार में लोकतंत्र और संविधान के हत्यारे को उनका अपना पद छोड़ने से पहले गणतंत्र दिवस पर राष्ट्रीय ध्वज फहराने दिया गया। अंततः बिहार की जनता ने लालू के दमनचक्र से बचने के लिए अपना जनमत का अधिकार का प्रयोग किया और कांग्रेस तथा लालू प्रसाद की आरजेडी गठबंधन को चुनावी लड़ाई में धूल चटा दी। वही एनडीए गठबंधन को भारी जीत मिली और नितीश कुार भाजपा के समर्थन से बिहार के मुख्यमंत्री बने व एनडीए सत्ता में आयी।

सोनिया गांधी के त्याग का ड्रामा

कांग्रेस पार्टी के पास गठबंधन में ५४३ लोकसभा सीटों में से मात्र १४३ सीटें (मात्र भाजपा से ७ अधिक सीटें) होने पर भी वह २००४ के आम चुनावों में भारी बहुमत होने का दावा करती है। वह खुद ही अपने घमण्ड का शिकार हो गई। सत्ता उसके सिर पर चढ़कर बोल रही हैं। इसकी सुप्रीम लीडर श्रीमती सोनिया गांधी का दर्प फूले नहीं समा रहा है और साथ ही कांग्रेसजनों की उसके प्रति गुलामी का भी कहीं कोई अन्त नहीं है।

लोकसभा चुनाव के पश्चात् प्रधानमंत्री न बनने की विवशता को स्वयं सोनिया गांधी ही जानती हैं परन्तु तथाकथित अपने आप को 'महान त्याग की मूर्ति' बताने वाली सोनिया गांधी के चापलूसों ने तो उन्हें भगवान गौतम बुद्ध तथा महात्मा गांधी की संज्ञा दे दी, जबकि सच यह है कि श्रीमती गांधी ने इस प्रकार 'त्याग की मूर्ति' का ड्रामा कर वह यूपीए सरकार की सुपर प्रधानमंत्री बन गई। श्रीमती गांधी ने एक तरफ तो 'त्याग की मूर्ति' का दावा किया, परन्तु वह दो हफ्ते भी अपने इस 'त्याग को कायम नहीं रख सकीं। उन्होंने एक संविधानेत्तर अधिकार प्राप्त करने का मौका ढूंढ कर राष्ट्रीय सलाहकार समिति (एनएसी) की चेयरपर्सन बनकर स्वयं को कैबिनेट मंत्री दर्जे की सभी

सुविधाओं और विशेषाधिकारों को प्राप्त कर लिया। इस पद को प्रधानमंत्री कार्यालय का हिस्सा बना लिया। अब वह बिना गोपनीयता की शपथ लिए भी सभी सरकारी फाइलों और दस्तावेजों को देख सकती हैं। एनएसी की सलाह को प्रधानमंत्री को दिया गया निर्देश समझा जाता है। इसका एक और लाभ है कि उनके पास पूरे अधिकार रहते हैं, जबकि उन पर जिम्मेदारी कोई नहीं रहती है।

एनएसी- संसदीय व्यवस्था का अभिशाप

प्रधानमंत्री यह समझा नहीं पाए हैं कि उनकी सरकार को अलग सलाहकार समिति की जरूरत क्यों पड़ी है, जबकि योजना आयोग के पास भी ठीक ऐसे ही अधिकार हैं। इसके अलावा प्रत्येक मंत्रालय को अपने सलाहकार नियुक्त करने की सुविधा रहती है। वास्तव में यूपीए के विभिन्न मंत्रालयों ने सलाह देने के लिए ५२ समितियां बनाकर खुद एक रिकार्ड स्थापित कर लिया है। इसके अलावा, प्रधानमंत्री के पास व्यापार, उद्योग और अर्थव्यवस्था की सलाहकार समितियां हैं। स्पष्ट है कि इसके पीछे एनएसी का गठन सरकार को किसी सलाह देने के लिए नहीं हुआ है, बल्कि यह तो एक व्यक्ति को वास्तविक अधिकार देने का छुपा हुआ रूप है, जिसे अन्यथा 'त्याग' की मूर्ति का चोला पहनाया जाता है।

क्या प्रधानमंत्री को अपनी मंत्रिपरिषद और अन्य संवैधानिक संस्थाओं से सलाह नहीं मिलती है कि उन्हें इस प्रकार के संविधानेतर अथॉरिटी की जरूरत पड़ती है और उस व्यक्ति को नामित करने का ढोंग रचा जाता है और वह भी श्रीमती गांधी ही उसकी अध्यक्ष होती हैं?

बिना जिम्मेदारी लिए सत्ता प्राप्ति की फिराक में

श्रीमती सोनिया गांधी के पास अपार राजनैतिक शक्ति और अधिकार प्राप्त है, परन्तु बुनियादी अंतर यह है कि वह किसी के प्रति भी, यहां तक कि संसद के प्रति भी उत्तरदायी और जवाबदेह नहीं है।

लाभ का पद

कांग्रेस पार्टी की ओर से एक कांग्रेसी नेता ने उत्तर प्रदेश से राज्य सभा की सांसद श्रीमती जया बच्चन के खिलाफ कानून का उल्लंघन करने का मामला उठाया क्योंकि श्रीमती बच्चन ने उत्तर प्रदेश बाल

फिल्म सोसाइटी के चेयरपर्सन का पद सम्भाला हुआ था। ये सब कुछ इसलिए हुआ क्योंकि बच्चन और गांधी परिवारों के अच्छे संबंध नहीं हैं। निर्वाचन आयोग की रिपोर्ट पर भारत के राष्ट्रपति ने राज्य सभा से उनकी सदस्यता समाप्त कर दी। परन्तु यह कदम खुद कांग्रेस पर उलटा जा पड़ा। देखा गया कि खुद उनकी अपनी नेता गलत रास्ते पर हैं क्योंकि सांसद होते हुए श्रीमती सोनिया गांधी प्रधानमंत्री से भी ऊंचे पद अर्थात् राष्ट्रीय सलाहकार परिषद की चेयरपर्सन बनी हुई हैं और उन्हें कैबिनेट का दर्जा प्राप्त हैं और वे अतिरिक्त लाभ व विशेषाधिकार प्राप्त कर रही हैं। सभी तरफ से घिरने के बाद और कोई रास्ता न मिलने के बाद कांग्रेसनीत यूपीए ने अचानक सबको हैरानी में डाल कर २२ मार्च को दोनों सदनों को अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दिया हालांकि कार्यक्रम के अनुसार दोनों सदनों को एक अंतराल के बाद १० मई को फिर से इकट्ठा होना था इसके पीछे कांग्रेस अध्यक्ष को अयोग्यता से बचाने के लिए अध्यादेश लाना था क्योंकि जब संसद का सदन सत्र में होता है तो अध्यादेश नहीं लाया जा सकता है। मीडिया में इस बारे में खबरें छपती रहीं।

भाजपानीत एनडीए और यूपीए के समर्थक वामपंथी पार्टियों ने भी इस कदम का जोरदार विरोध किया। भयाक्रांत श्रीमती गांधी ने इस स्थिति से बचने के लिए एक और त्याग करने का ड्रामा प्रस्तुत करने का संसद और एनएसी के पद से इस्तीफा दे दिया। यदि कांग्रेस और श्रीमती सोनिया गांधी महसूस करती थी कि उन्होंने कोई गलती नहीं की है तो उन्हें संसद एवं निर्वाचन आयोग का सामना करना चाहिए था और उन्हें अपना मामला भारत के राष्ट्रपति के सामने रखना चाहिए था। उन्होंने इस्तीफा इसलिए दिया क्योंकि उनके पास विधि-सम्मत नैतिक मामला था ही नहीं। वो इतना डर गई थी कि रायबरेली लोकसभा के उप-चुनाव के कार्यक्रम की भी घोषणा कर डाली। उन्होंने उपचुनावों में अपने नामांकन पत्र को बचाने के लिए हर पद से त्यागपत्र दे दिया ताकि इस बारे में कोई तकनीकी आधार उनके आड़े न आ जाएं।

संसदीय (अयोग्यता निवारण) संशोधन विधेयक, २००६ को, जिसमें १९५९ विधेयक में संशोधन किया गया है, लोक सभा में पारित किया गया जिसका एनडीए ने विरोध किया। इस विधेयक में ५६ पदों

को लाभ के पद के अंतर्गत विचार किए जाने से छूट प्रदान कर दी गई है और इन पदों में राष्ट्रीय सलाह परिषद के चेयरपर्सन को भी शामिल किया गया है। सदन से विधेयक में एक सरकारी संशोधन को शामिल कर लाभ के पद से बाहर रखने के लिए १० और पदों को भी स्वीकार कर लिया, जिनमें केन्द्रीय मंत्री रामविलास पासवान तथा मायावती द्वारा क्रमशः दलित सेना और बहुजन समाज फाऊण्डेशन के अध्यक्षों के पद भी शामिल हैं।

योजनाओं और संस्थाओं के नामों पर एक खानदान का कब्जा

यूपीए सरकार ने बड़े शर्मनाक ढंग से एक खानदानी कांग्रेसी परिवार की भूख को संतुष्ट करने के लिए योजनाओं और स्थानों के नामों को बदल डाला। इस सरकार ने हर चीज, हर योजना, हर संस्था का नाम परिवार के सदस्यों के नाम पर रख दिया है। कुछ योजनाओं और कुछ संस्थाओं के नामों में जिस एक परिवार के सदस्यों का नाम दिया गया है। उसके कुछ एक उदाहरण नीचे प्रस्तुत है–

१. राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना।
२. राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन
३. राजीव गांधी राष्ट्रीय छात्रवृत्ति योजना
४. राजीव गांधी श्रमिक कल्याण योजना
५. सुनामी प्रभावित क्षेत्रों के लिए राजीव गांधी पुनर्वास पैकेज
६. राजीव गांधी भवन (जहां–जहां नागरिक उड़ान मंत्रालय स्थित हैं)
७. राजीव चौक (नई दिल्ली)
८. राजीव गांधी खेलरत्न अवार्ड
९. राजीव गांधी अभ्युदय योजना (आंध्र प्रदेश)
१०. राजीव गांधी शिक्षा नगर (हरियाणा)
११. राजीव गांधी विद्यार्थी सुरक्षा योजना (महाराष्ट्र)
१२. राजीव गांधी रूरल हाउसिंग कार्पोरेशन (कर्नाटक)
१३. राजीव गांधी आवास योजना (हिमाचल प्रदेश)
१४. राजीव गांधी सेंटर फार बायो टेक्नोलाजी (केरल)
१५. राजीव गांधी अल्पाहार योजना (पांडिचेरी)

१६. राजीव गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा (हैदराबाद) –इससे पहले इसका नाम स्वर्गीय श्री एनटी रामाराव के नाम पर था.... आदि।

शासन का अपराधीकरण

पहली बार हमारे लोकतंत्र के इतिहास में विख्यात आपराधिक रिकार्ड वाले व्यक्तियों को भारत सरकार के मंत्री पद पर नियुक्त किया गया है। आज भी इन मंत्रियों के खिलाफ हत्या, बलात्कार, डकैती और लूटखसोट जैसे गम्भीर आरोप के मामले विभिन्न न्यायालयों में चल रहे हैं। श्री लालू प्रसाद और कुछ अन्य मंत्रियों के खिलाफ गम्भीर भ्रष्टाचार के आरोप लगे हुए हैं, विशेष रूप से श्री लालू प्रसाद को न केवल सीबीआई ने, बल्कि एक के बाद एक कई मामलों में, आरोप पत्र जारी किया है। कई न्यायालयों में हुई सुनवाई के बाद ये आरोप भी तय हो गए हैं। क्या किसी व्यक्ति के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा ४२० के अन्तर्गत आरोप लगने पर उसके हवाले रेलवे का खजाना सौंपा जा सकता है? परन्तु प्रधानमंत्री एक लाचार दर्शक बने हुए हैं।

मजहबी आधार पर देश के विभाजन का प्रयास

राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता को खतरे में डालने की कोशिश

केन्द्र में पूर्व की सरकारों ने कभी ऐसे निर्णय नहीं लिए, जिससे राष्ट्र की एकता–अखंडता के लिए इतनी समस्याएं उत्पन्न हों। सरकार का तो हर निर्णय राष्ट्र की एकता और अखंडता को मजबूती प्रदान करता है। ऐसा लगता है कि यूपीए सरकार ने ब्रिटिश राज्य की तर्ज पर 'फूट डालो और राज करो' की नीति अपनाते हुए अनेक ऐसे निर्णय लेने शुरू किए जो उनके राजनैतिक हितों के अनुकूल रहें चाहे उसके प्रभाव देश के लिए घातक ही क्यों न हों। 'वन्देमातरम्' का

विरोध करना और प्रधानमंत्री का यह कहना कि देश के संसाधनों पर मुसलमानों का पहला हक है, क्या राष्ट्रीय एकता के लिए खतरा नहीं बन सकते? अगर भारत में भाईचारे का संबंध नहीं होता और हमारी धर्म–निरपेक्षता की भावना प्रबल नहीं होती तो वातावरण बहुत दूषित हो जाता। संप्रग सरकार इतने पर ही नहीं रूकी। वह शायद तय कर चुकी है कि उनके निर्णयों की प्रतिक्रिया हो। गरीबी को साम्प्रदायिकता का रंग देना कहां तक वाजिब है? अल्पसंख्यक समुदाय दृष्टि से तो खतरनाक है ही, परन्तु आर्थिक दृष्टि से भी बिल्कुल निराधार है। विकास और गरीबी से लड़ाई में साम्प्रदायिक दृष्टि का सर्वथा त्याग करना चाहिए, परन्तु हमें यूपीए की केन्द्र सरकार ने ऐसे भी जिले चयनित किए हैं, जहां पर अल्पसंख्यकों की जनसंख्या अधिक है। इन जिलों के विशेष विकास पर केन्द्र सरकार का विशेष ध्यान रहेगा और इसके लिए बजट भी विशेष रूप से रखा गया है।

अल्पसंख्यक तुष्टिकरण

यूपीए सरकार के द्वारा चार वर्षों में किये गये चिंताजनक कार्यों में अल्पसंख्यक तुष्टिकरण प्रमुख है। सरकारी नौकरियों और शिक्षण संस्थानों में साम्प्रदायिक आरक्षण के अपने प्रयासों को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नकार दिये जाने के बाद केन्द्र सरकार ने बैंकों के ऋण और विकास योजनाओं में साम्प्रदायिक आधार पर अलग कोटा निर्धारित करने का प्रयास किया। देश के संसाधनों पर मुस्लिम समुदाय का पहला हक होने का प्रधानमंत्री का बयान अचंभित करने वाला रहा। समाज के सभी वर्गों का विकास होना चाहिए। विकास को साम्प्रदायिक रंग में रंगने का कोई भी प्रयास निन्दनीय है।

भारत सरकार की एक रिपोर्ट के अनुसार अल्पसंख्यक समुदाय के विकास के लिए आवंटित धन को ४०० करोड़ से बढ़ाकर १४०० करोड़ रूपए कर दिया गया है। दूसरी तरफ अनुसूचित जाति और अन्य पिछड़े वर्ग के विकास के लिए आवंटित धन में २ प्रतिशत की कटौती की गई है। यह समाज के पिछड़े और अनुसूचित वर्ग के साथ अन्याय है। यदि वास्तविकता में समाज के किसी वर्ग तक सरकारी सहायता और विकास के वास्तविक स्वरूप को सुनिश्चित करने की आवश्यकता है तो वे है अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति। सरकार को अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए

आवंटित धन में कटौती को समाप्त करना चाहिए और वह धन उचित ढंग से इन वर्गों के गरीब लोगों तक पहुंच सकें उस पर नजर रखने (monitoring) के लिए यदि आवश्यकता हो तो एक नोडल एजेंसी भी बनानी चाहिए।

अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक विभाजन

यूपीए ने देश की शिक्षा पद्धति में बहुसंख्यक–अल्पसंख्यक विभाजन की दीवार को चौड़ा करने का गहन प्रयास किया है। अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में मुस्लिमों के लिए ५० प्रतिशत आरक्षण का निर्णय एकदम साम्प्रदायिक निर्णय है।

भाजपा अल्पसंख्यकों में शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए कारगर सामाजिक उपाय की हामी है। किन्तु इस उत्कृष्ट उद्देश्य की पूर्ति मानव संसाधन मंत्रालय की बिना सोचे समझे निर्णयों से नहीं हो सकती है। इससे केवल उसका उद्देश्य चुनावों में कांग्रेस के लिए अल्पसंख्यकों के वोट हासिल करना है। कांग्रेस नेतृत्व इस प्रकार की विभाजनकारी राजनीति के दीर्घकालीन परिणामों से पूरी तरह उदासीन है।

प्रधानमंत्री का साम्प्रदायिक बयान

कांग्रेस के अल्पसंख्यक तुष्टीकरण की राजनीति को हवा देते हुए प्रधानमंत्री ने राष्ट्रीय विकास परिषद में यहां तक कह दिया कि देश के संसाधनों पर पहला हक अल्पसंख्यक समुदायों और विशेषकर मुस्लिम समुदाय का है। यदि देश के संसाधनों पर किसी का पहला हक बनता है तो गरीबों का बनता है, अनुसूचित जनजाति के लोगों का बनता है, दलितों का बनता है। परन्तु केन्द्र सरकार की नजर में निर्धन, वनवासी और दलित से अधिक महत्व मुस्लिम समुदाय दिखाई पड़ता है। पूरे समुदाय को सांप्रदायिक आधार पर सुविधा, आरक्षण या पहला हक देने की बात करना असंवैधानिक है। ऐसे प्रयासों के द्वारा यू.पी.ए. सरकार मुस्लिम समुदाय को राष्ट्र की मुख्य धारा से अलग–अलग रखने का प्रयास कर रही है।

राहुल की राजसी व सांप्रदायिक सोच

गत वर्ष ही में संपन्न हुए उत्तर प्रदेश के विधान सभा चुनाव के दौरान चुनावी रोड शो में कांग्रेस के राजकुमार श्री राहुल गांधी की

राजसी सोच उभर कर सामने आई। रोड शो के दौरान उन्होंने कहा कि यदि गांधी परिवार का कोई व्यक्ति सत्ता में रहा होता तो वर्ष १९९२ में बाबरी मस्जिद ढहने की घटना नहीं होती। उनके बयान से तो यही लगता है कि वह नेहरू-गांधी परिवार की राजसी सोच के शिकार हैं और वे गुलजारी लाल नंदा, लाल बहादुर शास्त्री और पी वी नरसिंहराव को कांग्रेस शासन का हिस्सा नहीं मानते। दरअसल, श्री राहुल का बयान वोट की राजनीति से प्रेरित था और यह हिन्दू विरोधी बयान है। इससे स्पष्ट है कि कांग्रेस का युवा व्यक्ति भी मुस्लिमों के तुष्टिकरण के लिए कितने निम्न स्तर पर जा सकता है। राहुल को शायद याद नहीं कि इन्हीं के परनाना पंडित जवाहरलाल नेहरू ने १९४९ में बाबरी मस्जिद में नमाज के लिए मुसलमानों के प्रवेश के लिए प्रतिबंध लगाया था और बाद में उनके पिता राजीव गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में मंदिर के द्वार पूजा के लिए खोल दिए गए थे।

राहुल गांधी ने यह भी कहा कि पाकिस्तान का विभाजन बांग्लादेश का निर्माण नेहरू-गांधी परिवार के कारण हुआ। इस वजह से भारत-पाकिस्तान राजनयिक संबंधों पर गहरा असर पड़ा। सच तो यह है कि श्री राहुल का यह बयान अहंकार से प्रेरित है और यह लोकतंत्र के लिए संकट का संकेत है।

कांग्रेस नेता व राज्यसभा सांसद ई. एम. सुदर्शन नचिप्पन ने राज्यसभा में बहस के दौरान कहा, 'राहुल गांधी हमारी पार्टी के युवराज है।' राजे रजवाड़े के दिन बीत गए हैं लेकिन कांग्रेस नेता आज भी राजसी सोच से ग्रस्त है। उन्हें समझना चाहिए कि लोकतंत्र में कोई युवराज नहीं होता।

राष्ट्रगीत वंदेमातरम् का अपमान

केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री अर्जुन सिंह ने वंदेमातरम्

राष्ट्रगीत शताब्दी वर्ष के अवसर पर राज्य सरकारों से ७ सितंबर, २००६ को स्कूलों में वंदेमातरम् गीत गाये जाने का निर्देश दिया। इसका देश के कुछ मुस्लिम समुदाय के नेताओं और सेकुलर बुद्धिजीवियों ने विरोध किया। तथाकथित मुस्लिम नेताओं एवं अल्पसंख्यक समुदाय की वोट बैंक की राजनीति को ध्यान में रखते हुए अर्जुन सिंह ने अपने आदेश से पलटते हुए कहा कि वंदेमातरम् को गाने के लिए किसी प्रकार की अनिवार्यता नहीं है। कांग्रेस एक बार फिर अपने ही जाल में फंस गई। उसके अल्पसंख्यक तुष्टिकरण का एक और नायाब उदाहरण तब सामने आया जब कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी और प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह राष्ट्रगीत वंदेमातरम् के सौ वर्ष पूरा होने के मौके पर गत ७ सितंबर को पार्टी द्वारा आयोजित कार्यक्रम में नहीं पहुंचे। उल्लेखनीय है कि प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह वंदेमातरम् समारोह समिति के अध्यक्ष भी थे।

अल्पसंख्यकों के लिए पृथक ऋण व्यवस्था

अल्पसंख्यक वोट बैंक को मजबूत करने के चक्कर में संप्रग सरकार धर्म के नाम पर समाज में जहर घोलने का काम कर रही है। संप्रग राज में जल्द ही ऐसा समय आने वाला है जब बैंकों को किसी व्यक्ति को उधार देने के लिए चैक लिखकर देना होगा तो उसे जानना होगा कि उसका धर्म क्या है? सरकार ने इण्डियन बैंक एसोसिएशन (आईबीए) से कहा है कि वह इस बात पर विचार करे कि वे जितना ऋण देती हैं, उसका कुछ हिस्सा अल्पसंख्यक समुदाय के लिए अलग से रख लिया जाए। यह हिस्सा बैंकिंग सेक्टर द्वारा दिए जाने वाले ऋण का लगभग ६ प्रतिशत की ऊंचाई तक जा पहुंचेगा। वित्त मंत्रालय के बैंकिंग प्रभाग से अपने ९ जनवरी के पत्र में आईबीए से कहा है कि वह इस प्रस्ताव पर विचार करे कि क्या अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों के लिए प्राथमिक सेक्टर में १५ प्रतिशत ऋण अलग से रखा जा सकता है?

सच्चर समिति : मजहबी आरक्षण की वकालत

केन्द्र सरकार ने मुसलमानों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति की जानकारी के लिए जस्टिस राजेन्द्र सच्चर के नेतृत्व में समिति का गठन किया। राजेन्द्र सच्चर समिति की सिफारिशें 'मजहबी आधार पर

आरक्षण' प्रदान करने वाली है जिन्हें देखकर १९०६ में मुस्लिम लीग की याद आ जाती है, जिसके कारण देश का विभाजन हुआ। सच्चर समिति की रिपोर्ट विभाजनकारी है और पूरी तरह से पूर्वाग्रहों से भरी पड़ी है। यह विकृत दृष्टिकोण को प्रकट करती है। समिति की सारी कवायद केवल यह साबित करने की रही कि मुस्लिम समाज हर क्षेत्र में बहुत पिछड़ा है। यदि मुस्लिम समुदाय की आज आजादी के ५९ वर्ष बाद ये स्थिति है तो इसके लिए क्या वे ही लोग जिम्मेदार नहीं है जिन्होंने इन ५९ में से ५४ वर्षों तक देश में शासन किया।

मदानी की रिहाई- क्या ये सचमुच सेक्युलर है?

कांग्रेस, यूपीए के सहयोगी दल और वामपंथी पार्टियां अल्पसंख्यकों के तुष्टिकरण के मामले में एक दूसरे से होड़ लगाने में जुटी हैं। यह बात फिर केरल की कांग्रेसनीत गठबंधन सरकार और वामपंथियों वाले गठबंधन से सिद्ध हो जाती हैं। केरल में कांग्रेसनीत यूडीएफ ने १६ मार्च २००६ को विधानसभा में एक प्रस्ताव पेश किया जिसमें खौफनाक आतंकवादी अब्दुल नासर मदानी की रिहाई का प्रस्ताव किया गया है जबकि उस पर बम विस्फोट अभियुक्तों को शरण देने के गम्भीर आरोप रहे हैं।

आपको याद होगा कि फरवरी १९९८ में एक चुनाव रैली में कोयम्बटूर में ओमा बाबू उर्फ मजीद तथा अन्य अभियुक्तों ने बम विस्फोट किए थे, जिसमें ५९ लोगों की मृत्यु हो गई थी और २०० निर्दोष लोग विकलांग हो गए थे। ऐसे लोगों को पनाह देने वाले मदानी थे। इसके अलावा भी उनका सम्पर्क पाकिस्तान के आईएसआई एजेण्टों से था जो अल उम्मा कार्यकर्ता को प्रशिक्षण देते थे। किन्तु विधानसभा चुनावों को नजर में रखते हुए सत्तारुढ़ कांग्रेस पार्टी और विपक्षी वामपंथियों ने मुस्लिम मतदाताओं की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए एक दूसरे से होड़ लगाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हो गया। आतंकवाद से लड़ने वाले इन यूपीए और वामपंथियों के सेकुलरिज्म की ईमानदारी के क्या कहने? क्या इसे ही सेक्युलरिज्म कहा जाता है?

धर्म आधारित आरक्षण

केवल वोट बैंक राजनीति के कारण आंध्र प्रदेश में कांग्रेस सरकार

ने राष्ट्रीय हितों की उपेक्षा करते हुए मजहब के आधार पर केवल मुस्लिमों के लिए सरकारी नौकरियों में ५ प्रतिशत सीटों का आरक्षण कर दिया। भाजपा ने इस प्रस्ताव का विरोध किया। उच्च न्यायालय ने मजहब आधारित आरक्षण को 'असंवैधानिक' करार दे दिया, फिर भी कांग्रेस संवैधानिक प्रावधानों के खिलाफ उपाए ढूंढने में लगी हुई है। कांग्रेस फिर अपनी युगों पुरानी अल्पसंख्यक वोट बैंक राजनीति पर लौट आई है। बहुसंख्यक–अल्पसंख्यक विभाजन करके सरकार सामाजिक कट्टरवाद को जन्म दे रही है।

तमिलनाडु सरकार द्वारा मुस्लिमों और ईसाइयों को आरक्षण

तमिलनाडु सरकार ने शिक्षा संस्थाओं और सरकारी नौकरियों में मुस्लिम और ईसाई समुदाय को आरक्षण देने की घोषणा की, जो समाज को धार्मिक आधार पर बांटने की कोशिश है। यह कार्य न केवल गैरसंवैधानिक है, बल्कि धर्मनिरपेक्षता के खिलाफ भी है। संविधान सभा में बहस के दौरान यह निर्णय लिया गया था कि धार्मिक आधार पर कोई आरक्षण नहीं दिया जाएगा। दुर्भाग्य की बात है कि यह सब कुछ वोट बैंक को ध्यान में रखकर किया जा रहा है, जो देश की एकता और अखंडता के लिए घातक है। सच तो यह है कि धार्मिक आधार पर आरक्षण धर्मान्तरण को बढ़ावा देता है।

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में साम्प्रदायिक आरक्षण

सेक्युलेरिज्म की आड़ में यूपीए के मानव संसाधन विकास मंत्री श्री अर्जुन सिंह ने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय (एएमयू) में ५० प्रतिशत मुस्लिम आरक्षण का आदेश दिया। उच्च न्यायालय ने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय को अल्पसंख्यक विश्वविद्यालय न मानते हुए इसे असंवैधानिक करार दे दिया। फिर भी, सरकार उच्चतम न्यायालय पहुंच गई है। हालांकि यह मामला न्यायाधीन है, फिर भी श्री अर्जुन सिंह ने कहना जारी रखा है कि वह न्यायालय के आदेश के बाद भी अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय को अल्पसंख्यक दर्जा दिलाने के लिए कृतबद्ध हैं।

कांग्रेस का 'तथाकथित सेक्युलर' चेहरा

हम यहां दो उदाहरण दे रहे हैं जिनमें कांग्रेस का वह सेक्युलर चेहरा सामने आ जाता है, जिसे कांग्रेस ने भारत को जाति और धर्म

के आधार पर बांटाः

१. अक्तूबर २००५ में बिहार विधानसभा चुनाव के पूर्व कांग्रेस ने धर्म और जाति के आधार पर अपने उम्मीदवारों की सूची जारी की। यह सूची इण्डियन एक्सप्रेस सहित सभी समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई। इस पर कांग्रेस की प्रवक्ता श्रीमती अम्बिका सोनी के हस्ताक्षर थे।

२. यूपीए द्वारा गठित जस्टिस राजेन्द्र सच्चर समिति ने हमारी हथियारबंद सेना से रक्षा सेवाओं में सभी मुस्लिमों की संख्या व सूची देने के लिए कहा।

श्रीराम सेतु पर प्रहार

संपूर्ण देशवासी श्रीराम सेतु पर आसन्न खतरे को लेकर चिंतित हैं। भगवान श्री राम द्वारा श्रीलंका और श्री रामेश्वरम् के बीच निर्मित विश्व का सबसे पुराना श्रीरामसेतु को तोड़ने की मंजूरी केन्द्र सरकार ने दी है। संप्रग सरकार हिन्दुओं की आस्था एवं विश्वास के साथ सुनियोजित षड्यंत्र कर रही है। वहीं दूसरी ओर मुगल शासकों द्वारा बनाए गए ताजमहल को बचाए जाने के लिए कारखानों को हटाया जा रहा है व कुतुबमीनार को बचाने के लिए मेट्रो का मार्ग बदला जा रहा है, लेकिन १७ लाख ५० हजार वर्ष पुराने श्रीराम सेतु को तोड़ा जा रहा है।

भारत में श्रीराम सेतु के पास मौजूद दुनिया का सबसे बड़ा रेडियोधर्मी थोरियम भंडार है, जिसके चलते विदेशी ताकतें भी सेतुसमुद्रम परियोजना को पूरा करने में सक्रिय है। यह क्षेत्र अंतरराष्ट्रीय नौकाओं के लिए खुला नहीं है। दूसरी ओर नया जल मार्ग अंतरराष्ट्रीय नौकाओं को इस रास्ते से गुजरने की अनुमति देगा, जिससे भारत के सागर तटों की सुरक्षा को बहुत बड़ा खतरा उत्पन्न हो जाएगा।

पर्यावरणविदों ने इस परियोजना पर गंभीर आपत्ति प्रकट की है। कनाडा के सुप्रसिद्ध सुनामी विशेषज्ञ प्रो. मूर्ति ने इस प्रस्तावित

जलमार्ग के जरिए केरल में विध्वंस पर गंभीर चिंता जताई है और कहा है कि अगर वर्तमान स्वरूप ही बनाए रखा गया तो भविष्य में आने वाली सुनामी लहरें उसे तबाह कर देंगी। दुर्भाग्य से तूतीकोरिन पोर्ट ट्रस्ट के अध्यक्ष ने प्रो. मूर्त्ति की इन चेतावनियों को पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया है।' गत ६ मई को एक बार फिर संप्रग सरकार को झटका लगा, जब उच्चतम न्यायालय ने अपने ऐतिहासिक निर्णय में केन्द्र सरकार से सेतुसमुद्रम परियोजना का वैकल्पिक मार्ग तलाशने को कहा जिससे रामसेतु को क्षतिग्रस्त नहीं करना पड़ें। श्रीराम सेतु को बचाते हुए मार्ग निर्धारित करने से यह सेतु भविष्य में भी सुनामियों के सामने एक दीवार की तरह काम करेगा। पिछली सुनामी में इस सेतु ने दक्षिणी तटों पर सुनामी का प्रकोप काफी हद तक कम कर दिया था, लेकिन संप्रग सरकार देश की बहुसंख्यक जनता के हितों पर कुठाराघात करते हुए श्रीराम सेतु को तोड़ने पर आमादा है। यह घोर अपराध है।

हिन्दुत्व पर आक्रमण की पराकाष्ठा सरकार ने तब दिखाई जब उसने श्रीराम सेतु के विषय पर अदालत में दायर हलफनामे में मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान श्रीराम के अस्तित्व को ही नकार दिया। ऐसा दुःसाहस तो प्रत्यक्ष विदेशी शासन के दौरान औरंगजेब और अंग्रेजों की हुकूमत भी नहीं कर पायी, जैसा स्वतंत्र भारत की लोकतांत्रिक सरकार ने किया।

अभी हाल ही में प्रख्यात बांग्लादेशी लेखिका तसलीमा नसरीन के साथ हैदराबाद में कुछ दुर्व्यवहार हुआ। उन्हें कोलकाता से एक प्रकार से निष्कासित किया गया। इन सबसे आगे जाकर भारत सरकार के एक मंत्री ने तसलीमा के वीजा की अवधि बढ़ाये जाने के संदर्भ में प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा कि सरकार उनके वीजा की अवधि बढ़ा देगी। परन्तु वे यहां तक कह गये क्योंकि तसलीमा नसरीन की पुस्तक से मुस्लिम समुदाय की भावना आहत हुई, इसलिए उन्हें मुस्लिम समुदाय से माफी मांगनी चाहिए। लेकिन इस सरकार द्वारा किसी चित्रकार के द्वारा हिन्दू देवियों के नग्न चित्र बनाने पर पूरे देश से माफी मांगने की बात नहीं कही गई बल्कि उसे तो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कहा गया। यह सरकार किसी एक लेखक या लेखिका के द्वारा किसी समुदाय की भावनायें आहत होने पर यदि इतनी संवेदनशील

है कि आहत समुदाय से माफी मांगने की बात कहती है तो अपने सहयोगी दल के अध्यक्ष और तमिलनाडु के मुख्यमंत्री द्वारा भगवान राम के प्रति कहे गये अपशब्दों के लिए उनको श्रीराम भक्तों के प्रति आस्था रखने वाले संपूर्ण जनमानस से माफी मांगने के लिए क्यों नहीं कहती। सबसे पहले तो सरकार को स्वयं रामसेतु के लिए दायर हल्फनामे में भगवान राम के अस्तित्व को नकारने के लिए राम के प्रति आस्था रखने वाले संपूर्ण जनमानस से माफी मांगनी चाहिए। क्योंकि राम के अस्तित्व को नकारना किसी व्यक्ति का विचार नहीं था, किसी एक नेता का विचार नहीं था, किसी लेखक या चित्रकार का व्यक्तिगत विचार नहीं था। हिन्दू समाज इतना उदार है कि इन चीजों को नजरन्दाज कर सकता है। परन्तु सरकार का हलफनामा देश के सर्वोच्च न्यायालय में सरकार की इच्छा की वैधानिक अभिव्यक्ति है और यदि पूरी सरकार की संवैधानिक अभिव्यक्ति सर्वोच्च न्यायालय में हिन्दू समुदाय के जनास्था के प्रतीक की अवमानना करती है तो यह अक्षम्य है।

श्रीराम सेतु केवल समुद्र में बना हुआ एक ढांचा नहीं है जिस पर इस बात को लेकर बहस हो कि वह मानव निर्मित है या प्राकृतिक। बल्कि यह भारत की पहचान और आसेतु हिमाचल के उद्घोष के साथ भारत की राष्ट्रीय और भौगोलिक एकता प्रथम शब्द है। यह वही मानसिकता है जो देश को एक जमीन का टुकड़ा समझती है और इस बात पर बहस करती है कि इस देश के वासी यहीं के थे अथवा बाहर से आये। इसलिये रामसेतु की रक्षा का संकल्प भारत की राष्ट्रीय अस्मिता, भौगोलिक अखंडता और सांस्कृतिक निरंतरता का महान संकल्प है जिसे पूर्ण करना हर राष्ट्रवादी भारतीय का कर्तव्य है। किन्तु इस यूपीए सरकार ने तमाम हिन्दू अनुयायिओं की यह मान्यता जो कि भारतीय संस्कृति में अगाध आस्था रखने के कारण धर्म के सिद्धांत किसी मत, संप्रदाय या पूजा पद्धति से जुड़े न होकर प्रकृति के शाश्वत सार्वभौमिक और सनातन सिद्धांत मानते हैं। को दरकिनार करते हुए धार्मिक आस्थाओं पर आघात किया है।

केन्द्र राज्य सम्बंध - बद से बदतर

गत चार वर्षों में यूपीए सरकार की कार्यवाहियों से साबित हो गया है कि वह फेड्रलिज्म (परिसंघवाद) में विश्वास नहीं करती हैं। सरकार

ने गैर-कांग्रेसी, गैर-यूपीए राज्य सरकारों और विशेष रूप से एनडीए द्वारा संचालित सरकारों के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया है।

श्री नरेन्द्र मोदी को विभिन्न प्रतिष्ठित संस्थाओं ने देश का नम्बर वन सफल मुख्यमंत्री स्वीकार किया है, जिनमें 'इण्डिया टुडे' और 'राजीव गांधी फाऊण्डेशन' भी शामिल है। एक प्रमुख सूचना प्रौद्योगिकी पत्रिका ने गुजरात को 'Data quest. E Governance Award' तक २००६ से सम्मानित भी किया है। फिर भी यूपीए भाजपा को परेशान करने का कोई अवसर चूकती नहीं है और इस प्रकार वह राज्य की प्रगति में बाधा बनती रहती है।

यही बात छत्तीसगढ़, राजस्थान, मध्य प्रदेश झारखण्ड और उत्तराखंड राज्यों पर भी ठीक उतरती है। सभी राज्य असाधारण रूप से प्रगति कर रहे हैं। राजस्थान ने विभिन्न कल्याणकारी परियोजना में सर्वोत्कृष्ट स्थान प्राप्त किया है, जिसमें रोजगार गारण्टी विधेयक को कार्यान्वयन करने का काम भी शामिल है। छत्तीसगढ़ और झारखण्ड ने विकास में नए मील के पत्थर स्थापित किए हैं। परन्तु इन सभी राज्यों के पास विकास के लिए धन की कमी है और उसका एकमात्र कारण यूपीए की संकीर्ण राजनैतिक सोच है।

हाल ही में मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने केन्द्र सरकार द्वारा प्रदेश की अनदेखी करने व पूर्ण रूप से आर्थिक सहायता प्रदान न करने के कारण एक दिवसीय उपवास का कार्यक्रम रखा।

शिक्षा का राजनीतिकरण

मानव संसाधन विकास मंत्री ने मतदाताओं के एक विशेष निर्वाचन क्षेत्र को प्रसन्न करने के लिए पाठ्य पुस्तकों के डिटोक्सीफाई करने के नाम पर इतिहास तथा भारतीय संस्कृति के तथ्यों से खिलवाड़ किया।

यूपीए सरकार शिक्षा का राजनीतिकरण कर देश का भविष्य चौपट करने पर तुली हुई है। ऐसा अक्सर होता है कि जब भी कांग्रेस और वामपंथी पार्टी एक होते हैं तो सबसे पहले वे शिक्षा व्यवस्था पर निशाना साधते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा के क्षेत्र में वामपंथियों और कांग्रेसियों ने सांठगांठ करके पाठ्य सामग्री को तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत किया ताकि भारत में 'राष्ट्रवादी विचार पुष्ट न हो सके। हमें इस बात का गर्व है कि राजग सरकार के शासन मे

तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री डा. मुरली मनोहर जोशी ने एनसीईआरटी पाठ्यक्रम में शामिल महापुरूषों, समुदायों और धर्म-संस्कृति के बारे में अपमानजनक तथ्यों को पारदर्शितापूर्ण तरीके से हटाया और भारत की गौरवशाली इतिहास को शामिल कराया। इसे देश का दुर्भाग्य ही कहेंगे कि अब पुनः राष्ट्रविरोधी पाठ्यपुस्तकों को केंद्र सरकार ने लागू कर दिया है।

हमारे देश के नौनिहाल अब फिर पढ़ रहे हैं कि पृथ्वीराज चौहान मैदान छोड़कर भाग गया और जयचंद गौरी से युद्ध भूमि में लड़ता हुआ मारा गया। महावीर के अतिरिक्त सभी तीर्थंकर काल्पनिक है। तिलक, अरविंद घोष, विपिन चंद्र पाल और लाला लाजपतराय जैसे नेता उग्रवादी तथा आतंकवादी थे। रणजीत सिंह अपने सिंहासन से उतरकर मुसलमान फकीरों के पैरों की धूल अपनी लंबी सफेद दाढ़ी से झाड़ता था। औरंगजेब जिंदा पीर थे। आज देश के सामने यक्ष प्रश्न है कि देश की युवा पीढ़ी इस तरह का इतिहास पढ़ेगी तो देश का भविष्य निश्चित रूप से अंधकारमय होगा।

बेरोजगार युवाओं के साथ विश्वासघात

यूपीए के न्यूनतम साझा कार्यक्रम में तुरन्त ही एक राष्ट्रीय रोजगार गारंटी कार्यक्रम बनाने का वायदा किया गया था जिसमें प्रत्येक ग्रामीण, शहरी गरीब और निम्न मध्यवर्गीय घर के प्रत्येक एक समर्थ व्यक्ति को सौ दिन की गांरटीशुदा रोजगार देने की बात कही गई थी। क्या एक परिवार, जिसमें औसतन ५ सदस्य हों, ६००० हजार रू प्रतिवर्ष की आय पर गुजारा हो सकता है? आखिर वे वर्ष के बाकी समय में क्या करेंगे? शहर के ४ करोड़ शिक्षित बेरोजगारों को इस बिल के लाभों से भी दूर रखा गया है। पिछले बजट में जिले तो बढ़ा दिए पर उसकी तुलना में राशि नहीं बढ़ाई।

भारत निर्माण का ढकोसला

प्रधानमंत्री ने ग्रामीण भारत में बड़े पैमाने पर विकास पहल सम्बंधी बिल की शुरूआत करने की घोषणा की है। भारत निर्माण कही जाने वाली योजना के विज्ञापन में कहा गया है कि अगले ४ वर्षों में एक लाख तिहत्तर हजार करोड़ रूपए खर्च किए जाएंगे। सच्चाई यह है कि यह कोई नई भारत निर्माण पहल की योजना नहीं है। यह और कुछ नहीं है बल्कि राजग सरकार द्वारा चलाई गई कई महत्वाकांक्षी परियोजनाओं और राजग सरकार द्वारा उठाए गए नूतन पहल की योजनाओं को नाम बदलकर नया रूप देने की कोशिश की गई है।

इंफ्रास्ट्रक्चर विकास की उपेक्षा

इंफ्रास्ट्रक्चर विकास धीमी गति से हो रहा है। राष्ट्रीय राजमार्ग विकास कार्यक्रम एकदम पीछे जा पड़ा है। यही बात राष्ट्रीय रेल विकास योजना पर भी लागू होती है, जिसे राजग सरकार ने शुरू किया था। पिछले चार वर्षों में कोई विशेष इंफ्रास्ट्रक्चर योजना शुरू नहीं हुई है।

प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना की उपेक्षा

वाजपेयी सरकार द्वारा शुरू की गई प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना स्वतंत्रता के बाद की सबसे बड़ी योजना थी। यूपीए सरकार ने इसको पर्याप्त रूप में धीमा कर दिया है। एनडीए के शासनकाल में सरकार ने २८०१ किलोमीटर सड़कों के निर्माण की प्रक्रिया को तेजी से बढ़ाया था।

नदियों को जोड़ने की योजना का परित्याग

नदियों को जोड़ने की महत्वाकांक्षी योजना भी एनडीए सरकार द्वारा चलाई गई अन्य मूल्यवान योजनाओं की तरह इस सरकार ने

सौतेला व्यवहार किया है और केवल राजनैतिक कारणों से इन पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है।

बिजली क्षेत्र के सुधारों का अंधकारमय भविष्य

देश में बिजली की आपूर्ति की स्थिति निरंतर बिगड़ती चली जा रही है जबकि यह सरकार बिजली अधिनियम में संशोधन पर बहस कर रही है।

कनेक्टिविटी

यह मानते हुए कि भारत के चहुमंखी और तेज विकास के लिए कनेक्टिविटी बहुत महत्वपूर्ण है। इसलिए एनडीए सरकार ने राष्ट्रीय राजमार्गों के निर्माण के लिए समयबद्ध कार्यक्रम चलाया था जिसमें ग्रामीण सड़कों का कार्यक्रम- पीएनजीएसवाई भी शामिल था। अधिकांश स्थलों पर यह कार्य धीमा पड़ गया है। नीतिगत भ्रमों के कारण बंदरगाहों और हवाई अड्डों का निर्माण कार्यक्रम भी पीछे रह गया है इससे आने वाले वर्षों में राष्ट्रीय विकास बुरी तरह प्रभावित होगा।

जल संसाधन

न्यूनतम साझा कार्यक्रम में वायदा किया गया था कि प्राथमिकता के आधार पर शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल उपलब्ध कराया जाएगा। दुर्भाग्य से सच यह है कि देश में, हर जगह पानी का अकाल पड़ा हुआ है। भारतीयों द्वारा देशभर में जिन नदियों की पूजा की जाती रही है, वे आज यूपीए सरकार के कुशासन के कारण जहरीले पानी का भंडार बन रही हैं। इसके कारण जल में प्रदूषण की मात्रा बढ़ने से हमारे स्वास्थ्य के लिए खतरनाक बन गया है।

ऊर्जा क्षेत्र

यूपीए सरकार ने पूरे देश को अंधकार का क्षेत्र बना दिया है। एनडीए सरकार ने विद्युत क्षेत्र में जो सुधार किए थे उन्हें यूपीए सरकार ने रोक दिया है और हर व्यक्ति पर इसका असर दिखाई पड़ता है। इस महत्वपूर्ण क्षेत्र में यूपीए सरकार का प्रदर्शन बहुत असंतोषजनक है जिसे हाल की योजना आयोग के आंकड़ों ने भी बताया है। बिजली का उत्पादन बढ़ती मांग के सामने स्थिर बना है। तेल और गैस के उत्पादन की कहानी भी ऐसी ही बद्तर है और तेल आयात पर हमारी निर्भरता बढ़ गयी है। ऊर्जा क्षेत्र में हमारा प्रदर्शन आर्थिक विकास,

रोजगार और जीवन के स्तर को प्रभावित करेगा।

स्वास्थ्य सेवाओं की उपेक्षा

इस समय यूपीए सरकार स्वास्थ्य सेवाओं पर जीडीपी का लगभग एक प्रतिशत खर्च कर रही है। न्यूनतम राष्ट्रीय साझा कार्यक्रम में ३ प्रतिशत खर्च करने का फैसला लिया गया था। अभी तक कुछ नहीं हुआ है। वहीं एनडीए सरकार के दौरान राज्यस्तर पर ६ एम्स खोलने की योजना को ठंडे बस्ते में डाल दिया गया है।

सिलिंग का कहर

सत्तामद में चूर दिल्ली की कांग्रेस सरकार जनता पर कहर ढा रही है। ''गरीब और आम आदमी'' के विकास का राग अलापने वाली कांग्रेस पार्टी उनके ही हितों पर कड़ा प्रहार कर रही है। सरकार की जनविरोधी और दमनकारी नीतियों से लोगों का जीना दूभर हो गया है। यह अजीब विडंबना है कि दिल्लीवासियों को रोजी-रोटी और रोजगार का दिलासा देकर सत्तासीन हुई कांग्रेस सरकार लोगों के घर और दुकानों पर बुलडोजर चला कर उन्हें उजाड़ने में लगी है। सरकार लोगों के दुकानों को जबरिया सील कर उनके व्यापार को बरबाद करने पर आमादा है। सरकार की साजिश से दिल्ली के पांच लाख दुकानदारों की आजीविका छीनने का प्रयास हो रहा है।

विफल विदेशनीति

भारत-अमेरिकी परमाणु समझौता

सरकार ने राष्ट्रीय हितों को अमरीका के पास गिरवी रखा

भारत–अमरीकी परमाणु समझौता इस सरकार के कामकाज की शैली का बेहद खराब उदाहरण है। प्रधानमंत्री ने किसी से सलाह मशविरा नहीं किया, यहां तक कि इस अत्यंत विवादास्पद तथा संदिग्ध विषय पर भी विदेश मंत्री से भी बातचीत नहीं हुई। इस समझौते पर देश पर पड़ने वाले गम्भीर परिणामों पर प्रतिबद्ध होने से पूर्व उन्होंने न तो राजनैतिक पार्टियों से और न ही संसद को विश्वास में लिया। इस समझौते पर अपना व्यक्तिगत प्रतिष्ठा का मामला समझकर उन्होंने लापरवाही भरे वक्तव्य दिए और फिर उन्होंने अपनी ही सरकार से हुए विरोधों का सामना करने पर तुरंत ही पीछे हटने में भी जरा देर नहीं लगाई। उन्होंने इस एकमात्र मुद्दे से ही भारत–अमरीकी द्विपक्षीय सम्बन्धों को खतरे में डाल दिया। इस पर भी भ्रांति चरम अवस्था में पहुंच गई और कोई नहीं जानता कि आखिर इस परमाणु समझौते का होगा तो क्या हाल होगा।

अमेरिकी विधायिका ने जो कानून पारित किया, वह निसंदेह भारत के हितों के खिलाफ है। इसकी कई शर्तें एनपीटी और सीटीबीटी की शर्तों से भी ज्यादा बाध्यकारी हैं। सच तो यह है यूपीए सरकार ने भारत–अमरीका परमाणु समझौते पर हस्ताक्षर करके राष्ट्रीय हितों को गिरवी रख दिया है

और इसके लिए उसने संसद की भी पूरी तरह से उपेक्षा की। दरअसल, अमेरिका जुलाई २००५ से ही अपनी रणनीति लगातार बदलता रहा है और भारत सरकार अमेरिकी दबाव के सामने घुटने टेकती रही है। प्रधानमंत्री द्वारा संसद को दिए गए बार–बार आश्वासन के बावजूद अमेरिका ने भारत के हितों की अनदेखी की। अमेरिका का असली मकसद भारत की आणविक हथियार क्षमता को पूर्णतया समाप्त करना है। अमरिकी कानून के मुताबिक आणुविक परीक्षण पर पूरी तरह से प्रतिबंध होगा, यहां तक कि सब–क्रिटिकल व अन्य परीक्षणों पर भी मनाही होगी, जो पूर्णतया शांतिपूर्ण उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किए जाते हैं। दरअसल, यह प्रतिबंध भारत के आणविक तकनिकी विकास को पूरी तरह से कुंद कर देगा। इसमें कोई दो राय नहीं कि यूपीए सरकार अमेरिकी दबाव में आकर भारत की आणविक सुरक्षा, तकनीक विकास और इसके भविष्य को बंधक बना रही है।

इस कानून के अनुसार एटामिक प्लांट्स की सभी सूचनाएं अमेरिकी को देनी होगी, जिसमें अति गोपनीय सूचनाएं भी शामिल हैं। इससे हमारे वैज्ञानिकों द्वारा एटामिक पावर सेक्टर में किए रिसर्च की गोपनीयता बनाए रखना असंभव होगा। बिल पर १५ दिसंबर २००६ को मुंबई में एटामिक एनर्जी कमिशन के चेयरमैन श्री अनिल काकोडकर भारत के आणविक ऊर्जा आयोग के पूर्व प्रमुखों से मिले और उन्हें बताया कि वे उनकी चिंताओं को प्रधानमंत्री तक पहुंचाएंगे। श्री काकोडकर जिन वैज्ञानिकों से मिले उनमें शामिल थे– श्री पी आर श्रीनिवासन, श्री होमी सेथना, श्री ए एन प्रसाद, श्री वाई एस आर प्रसाद, श्री पीके आयंगर और श्री ए आर गोपालकृष्णन। वैज्ञानिकों का मानना था कि बिल भारतीय हितों के विरूद्ध है और यह १८ जुलाई २००५ में हुए समझौते से काफी भिन्न है।

हाइड बिल के सीनेट और अमेरिकी कांग्रेस में पास होने से पहले अगस्त २००६ में वैज्ञानिक प्रधानमंत्री से मिले और उन्हें अपनी चिंताओं से अवगत कराया। साथ ही यह उम्मीद भी जाहिर की बिल में भारत के हितों की अनदेखी नहीं होगी। लेकिन दुर्भाग्य है कि ऐसा कुछ भी न हो सका। श्री ए एन प्रसाद ने कहा कि हाइड बिल मूल परमाणु समझौते से हट चुका है और प्रधानमंत्री द्वारा दिए गए आश्वासनों से भी अलग है।

भारत-अमेरिका सम्बंध

क्लिंटन प्रशासन ने पहली बार भारत को अपना ''स्वाभाविक मित्र देश'' माना था। और इस लिए वह रणनीतिक रूप में समन्वित दृष्टिकोण अपनाना चाहता था। जनवरी २००४ में एनडीए सरकार द्वारा घोषित एनएसएसपी का उद्देश्य सिविल न्यूक्लियर गतिविधियों, सिविल अंतरिक्ष कार्यक्रम उच्च टेक्नोलोजी व्यापार और मिसाइल रक्षा मामलों में सहयोग बढ़ाना था।

वर्ष २००५ में भारत अमेरिका सम्बंधों में बहुत महत्वपूर्ण रहे हैं। एनडीए सरकार की नीति का मुख्य बिन्दु भारत अमेरिकी सम्बंधों में धीरे-धीरे सुधार लाना रहा है। ताकि दोनों देशों के बीच की नीतियों में जो परिवर्तन और विरोधाभास रहे हैं उनको दुरूस्त किया जाए।

अमेरिका के साथ सहमति बनाने में यूपीए का असफल होना चिंता का विषय है। यूपीए सरकार की अस्पष्ट नीतियों से भारत यूएस सम्बंधों में दरार पड़ने और आपसी मित्रता और सहयोग की दीर्घकालीन सम्भावनाओं को क्षति पहुंचती नजर आती है। यूपीए सरकार यह समझ ही नहीं पाई है कि भारत के लोग अमेरिका के साथ ऐसे किसी संबंध को नफरत भरी निगाहों से देखते हैं जिसमें भारत को अमेरिका के सामने झुकना पड़ता हो।

भारत और संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद सुधार

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता के प्रश्न पर सरकार विरोधाभासी संकेत दे रही है। इसने संसद में एक वक्तव्य दिया कि बिना वीटो पावर के स्थायी सदस्यता को स्वीकार करने का कोई फायदा नहीं है। इसके बाद भारत सरकार ने अपना मन बदल लिया और लगता है कि वह इस मामले पर समझौता करने को तैयार है। देश में किसी को भी विश्वास में नहीं लिया गया। इस प्रकार के गम्भीर अन्तर्राष्ट्रीय मामलों को बड़े साधारण ढंग से लिया जाता है।

अस्थिर भारतीय उपमहाद्वीप

पिछले लंबे अरसे से पाकिस्तान में जिस प्रकार के हालात चल रहे हैं वह निरन्तर अस्थिरता की तरफ बढ़ रहे हैं। आंतरिक असंतोष वजीरस्तान के इलाके में विद्रोह, सेना में मतभेद की खबरें, आई.एस. आई. की स्वच्छंदता, अमरीकी फौजों की उपस्थिति के विरोध में

पनपता कट्टरवाद और इन सबके बीच आपात्काल की घोषणा और वापसी यह सब पाकिस्तान के अन्दर हो रहे खतरनाक और चिंताजनक घटनाक्रम का संकेत दे रहे थे। इसी बीच पाकिस्तान की पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती बेनजीर भुट्टो की हत्या ने आग में और घी का काम किया है। पाकिस्तान गहरे संकट की ओर बढ़ता नजर आ रहा है। पाकिस्तान की छवि पहले भी कभी एक जिम्मेदार राष्ट्र की नहीं रही और अब नित नई पेचीदगी उत्पन्न होने से और अधिक गैर-जिम्मेदाराना हरकतों की संभावना बढ़ जाती है जो भारत के लिए एक चिंता का विषय है।

पिछले दिनों एक अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका (अमरीका की न्यूज़ वीक) में प्रकाशित एक रिपोर्ट में कहा गया कि पाकिस्तान आतंकवादियों के लिए आरामगाह बन गया है। अफगानिस्तान की तरह पाकिस्तान में भी अलकायदा प्रमुख ओसामा बिन लादेन के लिए बहुत कुछ है। उस रिपोर्ट में यह भी कहा गया कि पूरे पाकिस्तान में अलकायदा का जाल फैला है और तालिबानी लड़ाकुओं का अफगानिस्तान से पाकिस्तान आना-जाना बेरोक-टोक चल रहा है। 'द इकोनोमिस्ट' पत्रिका के अनुसार पाकिस्तान आज विश्व की सबसे खतरनाक जगह हो गया है।

अमेरिका ने पिछले कई दशकों से पाकिस्तान में जो नीति अपनाई वह तो गलत सिद्ध हो ही चुकी है अपितु पिछले कुछ वर्षों से पाकिस्तान में सेना रख कर राजनीति को नियंत्रित करने की नीति भी कुछ प्रभावी परिणाम नहीं दिखा पा रही है। पाकिस्तान को मिल रही आर्थिक सहायता केवल आतंकवाद पर नियंत्रण के लिए है ऐसा मानना मुश्किल है। एफ-१६ लड़ाकू विमानों की खेप जिसमें न्यूक्लियर अटैचमेंट भी लगा हो, वह केवल आतंकवाद पर नियंत्रण के लिए नहीं मानी जा सकती। यह निश्चित रूप से भारत के लिए चिंता का विषय है।

नेपाल में माओवादियों की निरंतर बढ़ती आक्रामकता और उसी के साथ उनके द्वारा निरंतर भारत के विरूद्ध किया जा रहा दुष्प्रचार अब खतरनाक सीमा तक बढ़ रहा है। पिछले दिनों उत्तराखंड राज्य में नेपाल की ओर से माओवादियों ने घुसपैठ की कोशिश की। जिसे भाजपा और अन्य सहयोगी संगठनों के युवा कार्यकर्ताओं ने प्रदर्शन करके विफल किया। परन्तु यह भविष्य के लिए एक नई प्रकार की

समस्या का प्रतीक है।

नेपाल में मधेशियों की समस्या हमारे लिए चिंता की बात है। नेपाल में माओवादी शक्तियों का बढ़ता प्रभाव और उनके माध्यम से प्रजातांत्रिक व्यवस्था की स्थापना की संभावना खोजना एक अव्यावहारिक बात है। माओवाद सिद्धांततः प्रजातंत्र में आस्था नहीं रखता। अतः माओवादी प्रभाव में प्रजातंत्र का विकास एक विरोधाभासी बात लगती है। इसके प्रमाण भी दिखाई पड़े हैं। माओवादियों ने दबाव बनाकर नेपाल के स्वरूप में आधारभूत परिवर्तन एक कार्यकारी संसद के द्वारा करा लिया। जबकि यदि आधारभूत संरचना में कोई परिवर्तन आवश्यक भी हो तो यह जनता द्वारा चुनी गई संसद के द्वारा होना चाहिये। हम यह चाहते हैं कि नेपाल में प्रजातांत्रिक प्रक्रिया के द्वारा जनता की भावनाओं के अनुरूप एक शासन व्यवस्था स्थापित हो, यही नेपाल में स्थिरता के लिए आवश्यक है। भारत सरकार को इस ओर भी ध्यान देना चाहिए।

म्यांमार के अन्दर जिस प्रकार वहां के सैनिक शासन के विरूद्ध जनता का आक्रोश सड़कों पर आ रहा है वह कहीं न कहीं यह दर्शाता है कि म्यांमार की सरकार का नियंत्रण और समर्थन कम हो रहा है। वहां भारी संख्या में बौद्ध भिक्षु सरकार के विरोध में सड़क पर उतरे। सरकार ने बौद्ध भिक्षुओं का जिस प्रकार से दमन किया वह निन्दनीय है और हम उसकी भर्त्सना करते हैं। किसी भी धर्म के प्रतिनिधियों पर अत्याचार नहीं किया जाना चाहिए।

श्रीलंका में एल.टी.टी.ई. के साथ युद्ध विराम समाप्त हो चुका है और एक बार फिर एल.टी.टी.ई. पूरी आक्रामकता के साथ सक्रिय हो गया है। कोलंबो में आये दिन विस्फोट की घटनायें हो रही हैं। आतंकवादी घटनाओं के दबाव के चलते श्रीलंका में किसी अन्य देश को अपना प्रभाव स्थापित करने का अवसर न मिले, भारत सरकार को इस पर कड़ी नजर रखनी चाहिए। श्रीलंका के अंदर से कई बार यह बात उठी है कि वहां शांतिवार्ता के लिए भारत सरकार को पहल करनी चाहिए। परन्तु भारत सरकार इस दिशा में कोई भी प्रयास करती नजर नहीं आ रही है। मेरा मानना है कि श्रीलंका की तमिल समस्या का समाधान वार्ता के द्वारा ही संभव है। भारत सरकार को यह प्रयास करना चाहिए कि श्रीलंका मे युद्ध समाप्त हो और

शांतिवार्ता की प्रक्रिया पुनः शुरू हो सके।

पाकिस्तान की ही भांति बांग्लादेश भारत विरोधी गतिविधियों का एक नया केन्द्र बन रहा है। असम में उल्फा के आतंकवादी बांग्लादेश में शरण लेते हैं। पूर्वोत्तर के कई आतंकवादी संगठन बांग्लादेश और म्यांमार की सीमा से अपने को संचालित करते हैं। बांग्लादेश ने हाल ही में म्यांमार से भारत आने वाली गैस पाईपलाइन को अपने क्षेत्र से गुजरने की अनुमति नहीं दी। अभी कुछ माह पहले यह तथ्य प्रकाश में आया कि पिछले कुछ वर्षों में बांग्लादेश को हथियारों की सर्वाधिक आपूर्ति चीन के द्वारा हुई है। परन्तु भारत सरकार हाथ पर हाथ धरे बैठी है।

चीन ने म्यांमार में जिस प्रकार भारतीय नौसेना की गतिविधियों पर नजर रखने के लिए मॉनिटरिंग पोस्ट बनायी है और पाकिस्तान में ग्वादर में अपना डीप नैवल बेस बनाया है, यह सब भी हमारे लिए चिंता का विषय बनता है। चीन की भाषा में पिछले दिनों में कटुता दिखाई पड़ी है। म्यांमार, बांग्लादेश, श्रीलंका और पाकिस्तान में चीन की सक्रियता और नेपाल में माओवादी प्रभाव को यदि मिलाकर देखें तो ऐसा लगता है कि चीन द्वारा भारत को घेरने का प्रयास किया जा रहा है। प्रधानमंत्री महोदय को अपनी हाल ही चीन यात्रा के दौरान इस विषय को उठाना चाहिए था परन्तु सरकार ने प्रभावी प्रतिरोध तो छोड़िए विरोध की प्रभावी अभिव्यक्ति की इच्छाशक्ति भी दिखाई नहीं दी। उल्टे सरकार के समर्थक वामपंथी यह आरोप लगाते हैं कि भारत चीन को घेरने की प्रक्रिया का भाग हो रहा है। यह आरोप अनर्गल तो है ही साथ ही इससे ऐसे राजनैतिक दलों की सीमा पार की प्रतिबद्धता प्रकट होती है और राष्ट्रवाद के प्रति प्रतिबद्धता संदेह के घेरे में आती है। चीन द्वारा हाल ही में अरुणाचल प्रदेश में की गयी घुसपैठ, अरुणाचल के अधिकारियों को वीजा देने से मना करके एक प्रकार से अरुणाचल पर चीन ने अपना दावा कानूनी रूप से भारत सरकार के सामने रख दिया। हाल ही में विदेश मंत्री ने सार्वजनिक रूप से यह स्वीकार किया है कि चीन की तरफ से सीमा पर यदा-कदा घुसपैठ होती रहती है। इस पृष्ठभूमि में किसी भी प्रकार का स्पष्टीकरण लिए बगैर प्रधानमंत्री की यह चीन यात्रा कितनी औचित्यपूर्ण थी यह मेरी समझ से परे है।

अतः आज संपूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप में एक के बाद एक सभी पड़ोसी देश में प्रजातांत्रिक व्यवस्थाओं का क्षरण हो रहा है। तानाशाही, आतंकवादी और गृहयुद्ध करने वाली परिस्थितियों का निर्माण हो रहा है। अस्थिरता के साथ-साथ भारतीय उपमहाद्वीप भारत विरोधी वातावरण का क्षेत्र बनता जा रहा है। परन्तु भारत सरकार इस संदर्भ में अपनी शुतर्मुर्गी दृष्टि के चलते शायद इसे देख नहीं पा रही है, या इसे देख कर भी देखना नहीं चाह रही है। इसी कारण से इस संपूर्ण क्षेत्र के लिए वर्तमान भारत सरकार कोई भी प्रभावी नीति नहीं बना पा रही है।

मेरा यह मानना है कि विदेश नीति के साथ-साथ अब वह समय आ गया है कि भारतीय उपमहाद्वीप के संदर्भ में हम एक समग्र एवं समेकित दृष्टि (Comprehensive and integrated vision) रख कर एक अलग से क्षेत्रीय नीति बनानी चाहिए। ताकि भारतीय उपमहाद्वीप में स्थिरता, शांति और लोकतंत्र मजबूत हो सके। भारतीय उपमहाद्वीप से हमारा संबंध सिर्फ सुरक्षा की दृष्टि से ही नहीं अपितु आर्थिक विकास और व्यापार के विकास की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। परन्तु भारत सरकार के पास ऐसी कोई भी नीति नहीं है। इसलिए भारत की सीमायें आतंकवादियों की घुसपैठ के लिए एक आसान लक्ष्य बनती जा रही है।

पाकिस्तान

पिछले कुछ महीनों में मुम्बई और मालेगांव में हुए विस्फोट में पाकिस्तान का हाथ होने के स्पष्ट प्रमाण देश की जांच एजेंसियों को मिले। मुम्बई के पुलिस कमिश्नर ने स्वयं प्रेस कांफ्रेस में यह बात सार्वजनिक रूप से स्वीकार की कि मुम्बई के धमाकों में पाकिस्तान की खुफिया ऐजेंसी आई.एस.आई. का हाथ है। भारत सरकार ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए पाकिस्तान के ऊपर किसी भी प्रकार का कूटनीतिक दबाव बनाने में विफल रही है। इसके विपरीत भारत के प्रधानमंत्री उसी से कुछ दिन पूर्व हवाना के गुट निरपेक्ष सम्मेलन में पाकिस्तान के साथ आतंकवाद को रोकने के लिए संयुक्त प्रबंधन की घोषणा करते हैं इतना ही नहीं वो यह भी कहते हैं कि पाकिस्तान भी आतंकवाद से पीड़ित देश है। इससे पूर्व पाकिस्तान के राष्ट्रपति मुशर्रफ जम्मू-कश्मीर के लिए फार्मूला दे चुके हैं। वे जम्मू-कश्मीर के

संयुक्त प्रबन्धन की बात करते हैं। प्रधानमंत्री द्वारा इस सुझाव का स्वागत किया जाना आश्चर्यजनक ही नहीं बल्कि चिंताजनक भी लगता है।

सियाचीन

भारतीय सेना ने १९८४ से लेकर नियंत्रण रेखा के उत्तर में इस सामरिक क्षेत्र के विषय पर सुरक्षा तथा नियंत्रण के लिए बहुत बड़ा बलिदान दिया है। पिछले २३ वर्षों में पाकिस्तान ने सियाचीन से भारतीय सैनिकों को हटाने के लिए जी-तोड़ कोशिश की है जिसमें पाकिस्तान हमेशा विफल रहा है। सरकार को कूटनीतिक रूप से बात करते हुए ऐसा कोई उपहार पाकिस्तान को नहीं सौंप देना चाहिए जिसे हमें हमारे सैनिकों ने युद्ध क्षेत्र में बड़ी मेहनत से लड़ाई लड़ कर लिया है।

वास्तव में सियाचीन शिमला समझौते की एक विरासत है। जिसमें १९७१ में भारत-पाक युद्ध के बाद नियंत्रण रेखा को युद्ध विराम रेखा में परिवर्तित किया गया था। यदि मीडिया की रिपोर्टें सच हैं तो यूपीए सरकार एक अजीब समझौते करने पर विचार कर रही हैं जिसमें भारत साल्टोरे रिज से बाहर निकल आएगा जबकि पाकिस्तान परिभाषित एवं सीमांकित एजीपीएल छोड़ने पर सहमत नहीं हुआ है। वाशिंगटन में बैठे बहुत से चिंतक और रणनीतिक मामलों के विशेषज्ञ अधिकारी भारत पर ऐसे अजीबो-गरीब समझौते को स्वीकार करने का आग्रह भी कर रहे हैं।

चीन

पिछले वर्ष से चीन के राष्ट्रपति हू जिंताओ भारत की यात्रा पर आए थे। उससे पहले चीन के राजदूत ने यह कहा कि अरूणाचल प्रदेश चीन का हिस्सा है। इतना ही नहीं, चीन के राजदूत ने यहां तक कह दिया कि अरूणाचल की भूमि के आदान-प्रदान को लेकर भारत सरकार से वार्ता चल रही है। संसद में नेता प्रतिपक्ष श्री लालकृष्ण आडवाणी ने इस विषय को उठाया तो इसके उत्तर में सरकार के विदेश मंत्री का बयान पूरी तरह अस्पष्ट था। जिससे देशवासियों के मन का संशय दूर नहीं होता।

संप्रग शासन में देश की सीमाएं असुरक्षित है। भाजपा सांसद

किरेन रिजीजू ने अरूणाचल में चीनी घुसपैठ का मुद्दा उठाकर संप्रग सरकार की राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रति लापरवाही की पोल खोल दी। उन्होंने बताया कि चीन की सेना अरूणाचल में २० किलोमीटर अंदर घुस आई है। इस बारे में सांसद रिजीजू भारत सरकार को लम्बे अर्से से लिख रहे हैं और इनके जवाब में विदेश मंत्रालय ने माना भी है कि कुछ घुसपैठ अक्सर होती रहती है। प्रदेश के तवांग इलाके में फिर से चीनी घुसपैठ की रिपोर्टों पर रक्षा मंत्रालय और विदेश मंत्रालय पर चुप्पी साधे है। रक्षा मंत्रालय ने चीनी घुसपैठ की रिपोर्ट का खंडन औपचारिक तौर पर जारी नहीं किया। गौरतलब है कि सुमदोरांग छू घाटी का इलाका विवादास्पद है और वहां चीन की सेना सक्रिय है। रक्षा मंत्रालय द्वारा इस मसले पर मौन रहने से इन आशंकाओं को बल मिलता है कि घुसपैठ के मसले को केन्द्र सरकार दबाना चाहती है।

तिब्बत

तिब्बत में हाल की त्रासदी पर जिस ढंग से भारत सरकार ने कायरता का रूख अपनाया है, उससे देशवासियों को गहरी निराशा हुई है। अन्य मुद्दों की तरह ही यहां भी सरकार की एकमात्र चिंता विदेशी मामलों में चीन को खुश करना और देश में सीपीएम की चाटुकारिता करना रहा है। विशेष रूप से सीपीएम और सामान्यतः वामपंथी पार्टियों का तिब्बत के मामले में पूरी तरह से पर्दाफाश हो गया हैः यह बात तो और भी हास्यास्पद लगती है कि हम चीन की करतूतों और तिब्बत के दर्जे की तुलना जम्मू तथा कश्मीर के साथ करें। किन्तु उनका रूख तो प्रत्याशित आधार पर ही रहा है। और भी अधिक दुख का कारण तो यह है कि भारत सरकार ने इस मुद्दे पर पूरी तरह से आत्मसमर्पण कर दिया है। हम चीन को बताए कि तिब्बत का उनका औपनिवेशीकरण एक प्रकार से यहां के सम्पूर्ण लोगों और सभ्यता का दमन है, भारत सरकार के प्रतिनिधि दलाई लामा को निर्देश देते हैं कि उन्हें भारत में रहकर किस तरह का आचरण करना चाहिए।

भारत सरकार को स्पष्ट रूप से तिब्बत के लोगों पर दमन की इस घड़ी में उनका साथ देना चाहिए। हमें याद रखना होगा कि तिब्बत के साथ और तिब्बत में जो कुछ होता है, उससे भारत की सुरक्षा पर सीधा असर पड़ता है और साथ ही पूरी मानवता की सभ्यतामूलक विरासत प्रभावित होती है। यह निष्क्रिय तथा दिशाहीन सरकार हमारे

देश के प्रमुख सुरक्षा तथा कूटनीतिक हितों को नुकसान पहुंचा रही है और इसलिए लोगों को इसे बदल देने के लिए कमर कस लेनी चाहिए।

बांग्लादेश

सरकार बांग्लादेश के साथ बातचीत करने में भी उतनी ही असफल रही है। बांग्लादेश से घुसपैठ और अवैध रूप से आने वाले लोगों पर कोई नियंत्रण नहीं हो रहा है। पाकिस्तान आईएसआई बांग्लादेश को अपनी गतिविधियों के लिए अपना सुरक्षित स्थान समझती है। भारत सरकार दृढ़ता से इस स्थिति से मुकाबला करने में असफल रही है।

यूपीए सरकार के पास बांग्लादेश सरकार से बातचीत करने की कोई नीति ही नहीं है और वहां से भारत में आतंकवादी निरंतर आते रहते हैं और अपनी धरती पर भारतीय आतंकवादियों को भी पनाह देते रहते हैं। उन्होंने षड्यंत्रपूर्वक कई बार भारत के सीमा सुरक्षा बलों के अधिकारियों की निर्मम हत्या की परन्तु यूपीए सरकार सिर्फ शांति का शोर मचाती रही।

नेपाल

नेपाल पर इस सरकार ने सीपीएम की नीति अपनाकर राष्ट्रीय हितों को गहरे खतरे में डाल दिया है।

नेपाल में लोकतंत्र की बहाली हेतु नई संविधान सभा का चुनाव कराने तथा इन चुनावों में लोगों की राय की अभिव्यक्ति स्वागत योग्य है। किन्तु माओवादियों के रिकार्ड को देखकर चिंता होना स्वाभाविक है, जिन्होंने नेपाल में सत्ता पर काबिज होने का दावा किया है। माओवादियों ने जिस प्रकार से नेपाल में भारतीयों और भारतीयों हितों पर प्रहार किया है; चुनाव के बाद उनके नेताओं ने भारत को खुलेआम चेतावनी दी है; उन्होंने जिस प्रकार से देश के कानून के अनुरूप नव-निर्वाचित संविधान सभा द्वारा पहले से ही तथा एकतरफा ढंग से समाधान किए जाने की जो घोषाणाएं की हैं; माओवादी कार्यकर्ताओं द्वारा भारतीय सीमाओं पर हिंसा फैलाना और अपनी मांगों को स्वीकार कराने के लिए सड़कों पर जाकर लोगों को बाध्य करना; ये सभी ऐसे विषय हैं जो चिंता का कारण हैं।

वर्तमान स्थिति का संतुलन बड़ा नाजुक है। कहीं न कहीं हमारी

सरकार में ऐसी दक्षता, शासन-कौशल तथा राज्यमर्मज्ञता की जरूरत है, जिससे वह आज यह सुनिश्चित कर सके के नेपाल के लोगों के प्रमुख और स्थायी हितों पर कोई संकट न आए और भारत-नेपाल के सम्बन्धों, बंधनों और सहयोगों को और अधिक मजबूत बनाया जा सके। स्पष्ट है कि हमारी सरकार का पहला कदम यही होना चाहिए कि हम नेपाल के प्रति उस नीति पर न चलें जिनके कारण एक तरह से हाथ से निकल कर माओवादियों के हाथों में चला गया।

खतरे में आंतरिक सुरक्षा

यूपीए सरकार की दूसरी सबसे बड़ी विफलता आंतरिक सुरक्षा मोर्चे पर है। उसने कभी भी राजनैतिक तथा चुनावी कारणों से सीमा-पार आतंकवादियों, माओवादियों की गतिविधियों एवं विभाजनकारी तत्वों से निपटने के लिए कारगर उपाए नहीं किए फिर भी इस सरकार ने 'पोटा' हटा दिया। परिणामतः आतंकवादी संगठनों ने राजधानी में दिवाली के मौके पर विस्फोट करने की हिम्मत की और ६३ लोगों को मौत की नींद सुला दिया तथा २०० से अधिक लोग घायल हो गए जिनमें महिलाएं और बच्चे भी शामिल हैं। दुःख की बात है कि अभी तक भी अपराधियों को पकड़ने में कोई प्रगति नहीं हुई।

हमारी सूचना प्रौद्योगिकी की राजधानी बंगलौर भी आतंकवादियों के निशाने पर रही जिसमें एक प्रोफेसर की मृत्यु हो गई। आतंकवादियों ने अयोध्या में राम मन्दिर परिसर पर भी हमला बोला।

मुम्बई में श्रृंखलाबद्ध बम विस्फोट हुए। ११ जुलाई २००६ को मीरा मायंदर, जोगेश्वरी, माहीम, सांता क्रूज, खार, मटुंगा और बोरीबली स्टेशनों पर पश्चिमी रेलवे के प्रथम श्रेणी के डिब्बों में एक-एक करके सात विभिन्न स्थलों पर बम विस्फोट हुए जिनमें २०० लोगों की मृत्यु हो गई तथा ६२५ से अधिक लोग घायल हो गए। मालेगांव बम विस्फोटों में ४० निर्दोष लोगों की हत्या और ६५ लोग घायल हो गए। श्रीमती सोनिया गांधी तथा डा. मनमोहन सिंह का

महाराष्ट्र पुलिस का आदेश था कि वे इन घटनाओं के लिए एक विशेष अल्पसंख्यक वर्ग को निशाना न बनाए, इसलिए इन अपराधियों का पता लगाने में आगे प्रगति नहीं हो पाई।

पश्चिम बंगाल के जलपाईगुडी जिले में बेलाकोबा स्टेशन पर हल्दीबारी-सिलीगुडी पैसेंजर ट्रेन के अन्दर एक बार फिर आतंकवादियों ने बम विस्फोट किया। १० निर्दोष लोग मारे गए और ५० व्यक्ति घायल हो गए। २३ नवम्बर को असम में गुवाहाटी रेलवे स्टेशन के बाहर एक बम विस्फोट होने से ३ लोग मारे गए और ६ लोग घायल हो गए। समझौता एक्सप्रेस में हुए धमाकों ने एक बार फिर देश की सुरक्षा पर सवालिया निशान लगा दिया। घटना के बाद यह कहा गया कि दिल्ली में भारत और पाकिस्तान के विदेश मंत्रियों की बैठक के ठीक पहले आतंकवादियों ने इस घटना को अंजाम दिया, ताकि शांति वार्ता की गति को अवरोधित किया जा सके। १८ मई, २००७ को आंध्र प्रदेश की राजधानी हैदराबाद स्थित मक्का मस्जिद में किए गए बम विस्फोट में १४ बेकसूरों की जान गई थी। १६ फरवरी को पानीपत के निकट समझौता एक्सप्रेस में हुए बम विस्फोट में ६८ जानें गई थीं, हताहतों की संख्या १२५ थी। ११ जुलाई, २००६ को मुंबई की ट्रेनों में हुए श्रृंखलाबद्ध बम धमाकों ने १८७ निरपराधों को लील लिया, करीब ७०० गंभीर रूप से घायल हुए। २५ अगस्त को हैदराबाद में हुए बम विस्फोट में ४२ निरपराध मारे गए, ५४ गंभीर रूप से घायल हुए।

राजस्थान की राजधानी जयपुर में १३ मई, २००८ की शाम में हुए छह सिलसिलेवार बम विस्फोटों में कम से कम ८० लोगों की मौत हो गई और १५० से ज्यादा लोग घायल हो गए। जयपुर के हनुमान मंदिर के अलावा जौहरी बाजार, त्रिपोलिया बाजार, माणक चौक, बड़ी चौपड़ और छोटी चौपड़ पर बम विस्फोट हुए। यह पहला मौका है जब जयपुर किसी आतंकवादी कार्रवाई का शिकार हुआ है।

आतंकवादी घटनाएं एवं पोटा की आवश्यकता

यूपीए सरकार ने आने के बाद कुछ निर्णय ऐसे लिए जिसे देशवासी समझ नहीं पाए। उसी में से एक था पोटा। यूपीए सरकार जब से सत्ता में आई है तब से भाजपा लगातार पोटा लागू करने की मांग कर रही हैं। सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायधीश न्यायमूर्ति

बालाकृष्णन ने स्पष्ट तौर पर कहा है कि नागरिकों की हिफाजत सरकार की जवाबदेही है और इसके लिए कड़े कानून की आवश्यकता है। पोटा आज हमारे देश के लिए क्यों आवश्यक है अगर इस पर विचार करते हैं तो देखने में आता है कि पोटा लागू करने के पश्चात् आतंकवादी घटनाओं में कमी आई थी। यूपीए सरकार द्वारा पोटा हटाने के बाद अयोध्या में रामजन्म भूमि परिसर, जौनपुर के नजदीक श्रमजीवी एक्सप्रेस, दिल्ली में बैंगलोर, वाराणसी, संघ कार्यालय, मुंबई की ट्रेनों में, इंफाल के निकट इस्कॉन मंदिर, मालेगांव, पश्चिम बंगाल में ट्रेन समझौता एक्सप्रेस, मक्का मस्जिद हैदराबाद, गोरखपुर, लुम्बिनी पार्क हैदराबाद, अजमेर शरीफ, लखनऊ–वाराणसी–फैजाबाद की अदालत परिसर, रामपुर स्थित सीआरपीएफ कैम्प में आतंकवादियों ने हमला किया। इस प्रकार हम देखते है कि पोटा हटाने के बाद आतंकवादी घटनाओं में कई गुना वृद्धि हुई है। यूपीए सरकार हर निर्णय को वोट के तराजू पर तौलती है, जो सर्वथा अनुचित है।

उत्तर प्रदेश आतंकवादियों का नया लक्ष्य बन रहा है। ऐसा लगता है कि आतंकवाद ने वहां गहरी पैठ बना ली है। नक्सलवाद और अलगाववाद से पीड़ित भारत के लिए केन्द्रीय स्तर पर कोई नीति ही नहीं है। देश के १४ राज्यों के १६५ जिले प्रभावित है। यह बात स्वयं प्रधानमंत्री स्वीकार कर चुके हैं। लेकिन, अभी तक कोई ठोस नीति यूपीए सरकार द्वारा नहीं बनाई गई है। यूपीए सरकार के कार्यालय में देश में जितनी भी आतंकवादी घटनाएं हुई, उसमें किसी भी एक घटना की जांच पूरी करके उसकी जड़ तक नहीं पहुंचा जा सका है। यह सरकार की घोर विफलता की ओर इंगित करता है।

आतंकवाद

आतंकवाद भारत में स्थायी स्वरूप लेता जा रहा है। केन्द्र में कांग्रेस और वामपंथी सहयोग से चल रही सरकार से आने के बाद नक्सली आतंकवाद और जेहादी आतंकवाद दोनों ही बढ़े। नक्सली आतंकवाद छत्तीसगढ़, झारखंड, बिहार और आन्ध्र प्रदेश में विशेष रूप से समस्याजनक हो रहा है।

जेहादी आतंकवाद इस सरकार के आने के बाद पूरे देश में अपने पांव पसार चुका है। पिछले चार वर्षों में राजनैतिक, आर्थिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रवाद के स्वरूप माने जाने वाले लगभग सभी प्रमुख

नगरों पर आतंकवादी हमले हो चुके हैं। अब तो प्रमुख धर्मस्थलों और ईबादतगाहों पर भी बेतरतीब तरीके से आतंकवाद की घटनायें हो रही हैं।

पिछले एक दो वर्षों में आतंकवाद का विस्तार देश के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश में जिस तेजी से हो रहा है वह भी हमारे लिए चिंता का विषय है। ढाई वर्ष पूर्व श्रीराम जन्मभूमि पर आतंकवादी हमला, फिर काशी में संकट मोचन मंदिर पर हमला और पिछले दिनों लखनऊ, वाराणसी, फैजाबाद के न्यायालय परिसर में धमाके तथा रामपुर में केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल के कैंप पर आतंकवादी हमला यह दर्शा रहा है कि आतंकवाद अब देश के अंदरूनी भागों में हिन्दी हृदय क्षेत्र और विशेषकर उत्तर प्रदेश में मजबूती से पांव जमाता जा रहा है। उत्तर प्रदेश में हुए दो आतंकवादी हमले इस दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं कि एक तो पहली बार आतंकवादियों ने न्यायपालिका को भी आतंकित करने का प्रयास किया है। क्योंकि उत्तर प्रदेश के वकीलों ने आतंकवादियों का केस न लड़ने का निर्णय लिया था। यदि केन्द्र सरकार ने संसद के हमले के षड्यंत्र में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दोषी ठहराये जा चुके मोहम्मद अफज़ल की फांसी को इतने दिन तक न रोके रखा होता तो आतंकवादियों का मनोबल इतना नहीं बढ़ता कि वे न्यायपालिका को आतंकित करने की सोचें।

संसद पर हमले के साजिशकर्ता अफजल के माफीनामे का विषय इस समय राष्ट्रपति भवन और गृह मंत्रालय के मध्य कहां है? क्योंकि पूर्व राष्ट्रपति डा० अब्बुल कलाम ने यह कहा था कि उन्होंने जब इस विषय को गृह मंत्रालय को संदर्भित किया तो फिर उनके कार्यकाल में यह गृह मंत्रालय से लौटकर आया ही नहीं। सरकार आतंकवादियों को क्या संदेश देना चाहती है।

दूसरी बात काश्मीर के बाहर पहली बार किसी अर्धसैनिक बल के कैंप पर हमला होने की घटना हुई। उत्तर प्रदेश में यह सारी स्थितियां भाजपा सरकारों के जाने के बाद शुरू हुई। यह हमारे लिए एक राष्ट्रीय चिंता का विषय है क्योंकि नेपाल से लगी विस्तृत खुली सीमा के चलते यदि उत्तर प्रदेश में कानून व्यवस्था कमजोर होती है तो यह सारे उत्तर भारत के लिए असुरक्षा का एक नया द्वार खुल सकता है।

अब हर दृष्टि से यह समय आ गया है कि केन्द्र सरकार अपनी

पिछली भूल को सुधारे और आतंकवाद पर प्रभावी नियंत्रण लगाने के लिए पोटा को पुनः लागू करे। यदि उन्हें पोटा से इसलिए एतराज है कि वह भाजपा सरकार के समय बना था तो वह किसी भी अन्य नाम से एक आतंकवाद विरोधी कानून संसद में लाये। आज भारत दुनिया में एकमात्र बड़ा राष्ट्र है जो आतंकवाद से लड़ रहा है, परन्तु उसके पास कोई भी आतंकवाद विरोधी कानून नहीं है। सुरक्षा बलों को बगैर आतंकवाद विरोधी कानून के आतंकवाद से लड़ने के लिए कहना एक गैर बराबरी की लड़ाई है, एक घातक लड़ाई है जो आतंकवादियों के मनोबल को बढ़ा रही है और सुरक्षा बलों के मनोबल को गिरा रही है। हम ऐसा हरगिज नहीं होने देंगे।

राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार का बयान

राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार श्री एम.के. नारायणन ने मुनीच में ४३वें सुरक्षा नीति सम्मेलन में विभिन्न देशों के प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिनिधियों एवं शासनाध्यक्षों के सामने बोलते हुए जो कुछ कहा उससे भाजपा के इस कथन की पुष्टि होती है कि श्री मनमोहन सिंह के नेतृत्व में चल रही यूपीए सरकार आरम्भ से ही आतंकवाद के प्रति नरम रूख रखती है। यह बात स्वीकार की जाती रही है कि फर्जी सौदों के माध्यम से आतंकवादी ग्रुपों को धन देने के लिए भारत के स्टाक एक्सचेंजों का गलत दुरूपयोग किया जाता है जिससे भाजपा के इस कथन को और भी बल मिलता है कि भारत की धरती पर आतंकवादी और जेहादी उग्रवादी संगठनों के लिए विशाल मात्रा में धन-प्रवाह होता रहता है।

राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार का यह कहना कि पाकिस्तान की 'सरकारी एजेंसियां' भारत में उग्रवादियों के लिए लाखों डालर भेज रही हैं तथा इसके साथ ही साथ खुफिया तथा समानान्तर बैंकिग व्यवस्था का इस्तेमाल कर उनको धन पहुंचाया जा रहा है इससे पता चलता है कि हमारे देश में समग्र रूप से खुफिया नेटवर्क और इससे भी अधिक आर्थिक खुफिया तंत्र पूरी तरह से विफल है। यह बात भी पुष्ट होती है कि खुफिया तौर पर सूचनाएं इकट्ठा करने की व्यवस्था का ढांचा ही गिर चुका है। हमारा आरोप है कि सरकार और नियामक प्राधिकरण सुरक्षा मोर्चे पर पूरी तरह से विफल हो चुके हैं।

भाजपा सदैव इस बात पर जोर देती रही है कि बांग्लादेशियों का इस देश में बड़ी संख्या में आने से रोका जाए और उन विदेशियों को

निष्कासित किया जाए जिससे राष्ट्रीय सुरक्षा पर बुरा असर पड़ता है और साथ ही यह भी देखा गया है कि यूपीए सरकार इसके प्रति लापरवाह रही है, बल्कि उसने असम में पिछले दरवाजे से उस आईएमडीटी एक्ट को लेकर आई जिसे सुप्रीम कोर्ट ने रद्द कर दिया था, जिससे राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार की यह बात और भी पुष्ट होकर सामने आती है कि बांग्लादेश से भारत की धरती पर आतंकवादी गतिविधियां चलाने के लिए नकली करेंसी का बड़े पैमाने पर उपयोग होता है।

राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार का यह बयान कि आतंकवादी ग्रुप रेस्त्रां, सम्पत्ति खरीदने-बेचने, जहाजरानी आदि जैसे वैध धंधों में लगे हुए हैं, जिससे पता चलता है कि सरकार वित्तीय सौदों की धोखाधड़ी रोकने के काम में भी लाचार नजर आती है।

सेना वापसी की साजिश

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि एक ओर जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद बढ़ रहा है, वहीं कुछ राष्ट्रविरोधी ताकतें जम्मू-कश्मीर से सेना वापसी की मांग कर रहे हैं। इस तरह की साजिश से सेना का मनोबल गिरता है। गौरतलब है कि आतंकवादी भारत को साफ्ट स्टेट मानकर चल रहे हैं। ऐसे में यूपीए सरकार को आतंकवाद के खिलाफ सख्त कदम उठाना चाहिए लेकिन इसके बजाए सरकार संकीर्ण राजनीति कर रही है, जो चिंता का विषय है। भारत की जनता किसी तरह का देशद्रोही निर्णय व कश्मीर से सेना की वापसी स्वीकार नहीं करेगी।

पोटा वापसी

पोटा को हटाने से आतंकवाद के खिलाफ चल रही लड़ाई पर विपरीत असर पड़ा है। यूपीए सरकार ने आतंकवादी निवारण अधिनियम को भी समाप्त कर मुसलमानों और कम्युनिस्टों को संतुष्ट करने के लिए किया, जिससे यह साफ नजर आने लगा है कि भारत अंतराष्ट्रीय क्षेत्रों में भी आतंकवादी ताकतों से निपटने की ताकत खो बैठा है।

रिपोर्ट में यह भी कहा है कि ''जम्मू और कश्मीर में सबसे अधिक आतंकवादी ग्रुप और विभाजनकारी तत्व है, पूर्वी भारत में 'नक्सलवादी पट्टी' में माओवादी है और भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में जातीय-भाषायी राष्ट्रवादी' संहारक क्षमता रखते हैं।''

आतंकवाद-विरोधी कानून पर आधारित कोई कानूनी प्रणाली नहीं है, इसके अलावा भारत के आतंकवाद से लड़ने के प्रयासों में एक और बड़ी खामी यह है कि सुरक्षा बलों के पास ठीक प्रकार के हथियार भी नहीं है- ''भारत की स्थानीय पुलिसकर्मियों का ठीक ढंग से प्रशिक्षण नहीं दिया जाता है और उनके पास आतंकवाद के साथ लड़ने के लिए प्रभावी हथियार भी नहीं है।''

आतंकवाद से समझौता- 'अफजल बचाओ'

यूपीए सरकार आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई लड़ने में अक्षम है। वह वोट बैंक की खातिर किसी हद तक जा सकती है। मोहम्मद अफजल गुरु को माफी देने के मामले में यूपीए सरकार पूरी तरह मौन धारण किए हुए है, जबकि देश की सर्वोच्च न्यायालय उसे मृत्युदंड की सजा सुना चुकी है। भारतीय संसद पर १३ दिसम्बर २००१ को हुए आतंकी हमले के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने अफजल गुरु को हत्या, आपराधिक षड्यंत्र और देशद्रोह में दोषी पाया है।

संसद पर हमला पूरी तरह से उस छद्मयुद्ध की गहरी छाया ही थी, जो पाकिस्तान ने भारत के विरुद्ध सीमापार आतंकवाद के माध्यम से छेड़ रखा है। यह न केवल भारतीय लोकतंत्र के मंदिर पर हमला था बल्कि भारत की सम्प्रभुता पर भी एक दुस्साहसपूर्ण हमला था। इस हमले के पीछे किसी भी राजनैतिक दल का लिहाज किए बिना सभी सांसदों और सरकार के सभी नेताओं के साथ-साथ पूरी भारतीय शासन व्यवस्था को समाप्त कर देने की विद्वेषपूर्ण साजिश थी।

विश्व के किसी भी देश ने इस तरह का वीभत्स आतंकवादी हमला नहीं देखा होगा। यही कारण था कि संसद पर तैनात बारह सुरक्षाकर्मियों ने अपनी आहुति देकर भारत के संसद और सांसदों की जान बचाई।

यह दुख और हैरानी की बात है कि मानवाधिकार के कुछ स्वयंभू ठेकेदार 'अफजल बचाओ' अभियान में जुट गए और वे सभी लोग कांग्रेस और कम्युनिस्ट पार्टी से सहानुभूति रखते हैं।

शहीदों के परिजनों का पदक लौटाना दु:खद

संसद के हमले के शहीद के परिवारों ने राष्ट्रद्रोही अफजल को फांसी दिये जाने के मामले में कांग्रेस के नरम रूख के विरोध में

सरकार द्वारा दिये गये वीरता के पदक लौटा दिये। शहीदों के परिवारों द्वारा पदक लौटाना केन्द्र सरकार की वोट बैंक की राजनीति पर करारा प्रहार है।

मदनी और अफजल के नाम पर कांग्रेस को वोट दो

दिसम्बर २००६ में केरल में तिरूवंमबाडी विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र में सम्पन्न उप-चुनावों में कांग्रेस और कम्युनिस्टों ने राष्ट्रीय या राज्य के मुद्दों पर चुनाव नहीं लड़ा, बल्कि यह चुनाव आतंकवादी, नितांत कम्युनिस्ट और इराकी तानाशाह सद्दाम हुसैन के बीच था। सीपीएम ने एक पोस्टर जारी किया, जिसमें उन्होंने अपने उम्मीदवार के लिए मदानी के चित्र लगाकर वोट मांगे। कांग्रेस कोयम्बटूर शृंखलाबद्ध बम विस्फोट मामले के 'टेरर किंग' अब्दुल नासिर मदानी के आगे झुकने में जरा नहीं हिचकिचाई। कांग्रेस पोस्टरों में प्रधानमंत्री या श्रीमती सोनिया गांधी के चित्र भी नहीं थे। परन्तु उसने मदानी और सद्दाम हुसैन के नाम पर वोट मांगे। कुछ स्थानों पर, कांग्रेस ने संसद मामले के उस अभियुक्त अफजल गुरू के नाम पर भी वोट मांगे, जिन्हें देश के सर्वोच्च न्यायालय ने फांसी की सजा सुना रखी है। अंत में सत्तारूढ़ सीपीएम ने २४६ वोटों के बहुमत से तिरस्कारपूर्ण ढंग से जीती क्योंकि तथ्य यह है कि सत्ताधारी पार्टी एलडीएफ ने इसी सीट पर ५००० से अधिक वोटों से विजय प्राप्त की थी। मदानी ने मुस्लिमों को फतवा जारी किया था कि वे सीपीएम उम्मीदवारों को वोट दें।

फिर भी माकपा और कांग्रेस सेक्युलर होने की डींग हांक रही है। यह विडम्बना ही है कि एक तरफ कांग्रेस और कम्युनिस्ट वीर सावरकर जैसे राष्ट्रवादियों पर कटाक्ष कर रही है तो दूसरी तरफ वोट की खातिर खतरनाक आतंकवादियों को सम्मान दे रही है।

गिलानी का राष्ट्रविरोधी कृत्य

पिछले वर्ष श्रीनगर में आयोजित भारत विरोधी रैली में अलगाववादी नेता सैयद अली शाह गिलानी ने भारत के खिलाफ विषवमन कर केन्द्र सरकार की कश्मीर नीति को कड़ी चुनौती दी। रैली में लश्कर-ए-तोयबा एवं हिज्बुल मुजाहिद्दीन ने भारत विरोधी नारे लगाए एवं अपने झण्डे लहराए। यह भारत विरोधी रैली केन्द्र सरकार की अलगाववादियों व आतंकियों के प्रति नरम नीतियों का नतीजा है। कश्मीर में इस तरह के भारत विरोधी आयोजन से केन्द्र सरकार की आंखें खुल जानी

चाहिए। जहां एक ओर कश्मीर में स्वशासन की बात हो रही है, वहीं कश्मीर से सेना वापसी का षड्यंत्र रचा जा रहा है। कश्मीर का विसैन्यीकरण करने की मांग तभी क्यों उठती है, जबकि सेना आतंकियों पर बिल्कुल भारी पड़ चुकी होती है। प्रधानमंत्री द्वारा बार-बार गिलानी को बातचीत के लिए न्यौता देना चिंता का विषय है। इस राष्ट्रविरोधी कृत्य के लिए गिलानी के खिलाफ जम्मू-कश्मीर सरकार राष्ट्रद्रोह का मुकदमा दर्ज करने के बजाए चुप्पी साधी हुई है।

वामपंथी हिंसा के शिकार किसान और मजदूर

वामपंथियों के अलोकतांत्रिक आचरण से उनके शासित राज्यों में किसान और मजदूर दमन और अत्याचार से आहत हैं। सिंगुर और नंदीग्राम ने वामपंथियों के शासन की असली चाल, चरित्र और चेहरा दिखा दिया। जिन सर्वहारा के हितों में झूठा दंभ भरकर ये सत्ता हथियाते हैं, वामपंथी इन्हीं मजदूर-गरीब किसानों पर गोलियां बरसाने से नहीं हिचकते। किसानों का कसूर सिर्फ इतना भर है कि वे वामपंथी सरकार से अपना हक मांग रहे हैं। पश्चिम बंगाल की वाममोर्चा सरकार के इशारे पर पुलिस ने ही नहीं बल्कि समाचारों के अनुसार सीपीएम कार्यकर्ताओं ने भी जमकर गोलियां बरसाईं। नंदीग्राम में मानवता के सभी मूल्यों को रौंद दिया गया। पश्चिम बंगाल में राज्यपाल, उच्च न्यायालय के न्यायाधीश एवं यहां के बुद्धिजीवियों ने भी वामपंथी सरकार की भर्त्सना की। नंदीग्राम में किसानों पर हमला मार्क्सवादी पार्टी और पश्चिम बंगाल सरकार की सोची-समझी योजना के तहत हुई थी।

नंदीग्राम नरसंहार

नंदीग्राम में माकपा का खूनी चेहरा एकबार फिर उजागर हुआ। जिनके हितों का झूटी दंभ भरकर ये सत्ता हथियाते है, नंदीग्राम में माकपा इन्हीं मजदूर-गरीब किसानों को गोलियों से भून दिया। किसानों का कसूर केवल इतना ही था कि वे अपना हक मांग रहे थे। ग़ौरतलब है कि किसानों ने नंदीग्राम में इंडोनेशियाई औद्योगिक घराने सलीम समूह के प्रस्तावित रासायनिक कारखानों के लिए □ू-अधिग्रहण का जमकर विरोध किया। वामपंथी सरकार ने इस संयंत्र की स्थापना के लिए इस गाँव की ज़मीन का अधिग्रहण कर लिया था। स्थानीय लोग अपनी ज़मीन पर ऐसी कोई इकाई नहीं चाहते हैं। १४ मार्च, २००७

को नंदीग्राम में विरोध प्रदर्शन कर रहे किसानों पर वाम मोर्चा सरकार के इशारे पर पुलिस ने जमकर गोलियां बरसाई, जिसमें कम से कम २० लोग मारे गए और २०० से अधिक घायल हो गए।

पश्चिम बंगाल में यूपीए का एक प्रमुख दल शासन चला रहा हैं। यह बहुत ही दुख की बात है कि जहां एक तरफ राज्यपाल श्री गोपालकृष्ण गांधी ने अपनी आत्मा की आवाज के कारण इस रक्तपात पर अपना गहरा रोष प्रगट किया और महामहिम राष्ट्रपति ने अप्रत्यक्ष रूप से जबरदस्ती भू-अधिग्रहण की आलोचना की, इतना ही नहीं तो कलकत्ता हाई कोर्ट ने सीबीआई जांच का आदेश दिया। नंदीग्राम में अभी तक आतंक का माहौल छाया हुआ है और सैंकड़ों लोग अपने घरों से गायब हैं।

सिंगूर में किसानों पर लाठी चार्ज

देशभर में पानी पी-पी कर पूंजीपतियों को कोसने वाली मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी (माकपा) ने पश्चिम बंगाल में शर्मनाक तरीके से पूंजीपतियों का पिटठू बन कर किसानों पर जुल्म ढाया और केंद्र सरकार अपनी मजबूरियों के चलते मूक दर्शक बनी रही। वहां पर किसान, मजदूर और समाज के पिछड़े लोगों का बुरा हाल है। माकपा का किसान विरोधी चेहरा उजागर हो गया है। किसानों और मजदूरों के हितों का राग अलापने वाली माकपा के एजेण्डे में केवल पूंजीपतियों और अमीरों का हित संवर्द्धन है।

गौरतलब है कि पश्चिम बंगाल की वाममोर्चा सरकार ने सिंगूर में टाटा मोटर्स को छोटी कार परियोजना के लिए किसानों की उपजाऊ जमीन दे दी है। इस फैसले के खिलाफ तृणमूल कांग्रेस और भारतीय जनता पार्टी के बैनर तले किसानों ने संघर्ष छेड़ दिया। इस आंदोलन को कुचलने के लिए सरकार के इशारे पर पुलिस ने गरीब किसानों पर बर्बरतापूर्ण लाठीचार्ज किया।

कन्नूर की घटना:वामपंथी आतंक का काला चेहरा

केरल में लगातार हिंसा का तांडव हो रहा है। यहां जब-जब माकपा सत्तासीन हुई है, तब-तब हिंसा का नंगा नाच हुआ है। कारण साफ है वामपंथी दलों में अपने विरोधियों की हत्या कर देने की परंपरा है। केरल में मार्क्सवादी गुंडों ने बड़े पैमाने पर राजनीतिक विरोधियों

की हत्या की है। मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी का चिह्न हंसिया और हथौड़ा सार्थक साबित हो रहा है। इस हंसिया और हथौड़ा से माकपा केरल में अपने विरोधियों प्रमुख रूप से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, भारतीय जनता पार्टी, विद्यार्थी परिषद्, भारतीय मजदूर संघ जैसे राष्ट्रवादी संगठनों के कार्यकर्ताओं पर जिस तरीके से बर्बर हमले कर रही हैं, उसे सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। यह हिंसा राज्य-समर्थित कत्लेआम है। लोकतंत्र में हिंसा के लिए कोई स्थान नहीं है। लेकिन मार्क्सवादियों को लोकतंत्र और देश की कानून-व्यवस्था में आस्था नहीं है।

राशन की कालाबाजारी:दुकानों की लूट

पश्चिम बंगाल में चारों ओर अराजकता व्याप्त है। हाल ही में जारी किए गए राष्ट्रीय सांख्यिकी सर्वेक्षण के मुताबिक साल के कुछ महिनों में कई दिन भूखे सोने वाले परिवार, पश्चिम बंगाल में सबसे ज्यादा (१०.६४ प्रतिशत) पाए गए। पश्चिम बंगाल में पिछले दिनों सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) में बड़े पैमाने पर घोटाले हुए। गौर करने वाली बात यह है कि राशन की दुकान बांटने की जिम्मेदारी जिन पर है, उनमें एक पंचायत प्रमुख एक गणमान्य नागरिक और एक खाद्य विभाग का अधिकारी होता है। यहां पंचायत प्रमुख और गणमान्य नागरिक वामपंथी दलों से संबंधित होते हैं। पीडीएस में दो हजार करोड़ से भी अधिक के घोटाले का मामला सीएजी की रिपोर्ट में आया है। पश्चिम बंगाल की जनता ने इसके विरोध में पूरे प्रांत में खाद्य आंदोलन छेड़ दिया। आंदोलनकारियों को सस्ती दर पर अनाज देने के बजाए पश्चिम बंगाल की वामपंथी सरकार ने उन पर लाठी और गोलियां बरसाना शुरू कर दिया।

अजीब विडम्बना है मजदूर-किसानों पर ऐसा दमन करने वाली कम्युनिस्ट पार्टी के हाथों में यूपीए सरकार का नियंत्रण है। राष्ट्रहित और जनहित को दरकिनार कर सत्ता को ही सब कुछ मानने वाली कांग्रेस माकपा के खिलाफ कोई भी कदम नहीं उठा रही है, उल्टे सत्ता में बने रहने के लिए कांग्रेस-वामपंथियों के इस कृत्य का परोक्ष रूप से अनुमोदन कर रही है। केरल और त्रिपुरा में भी वामपंथी आतंक की शिकार आम जनता हो रही है। मंत्रियों और माकपाइयों के भ्रष्टाचार खुलकर सामने आ रहे हैं।

नक्सलवादी/माओवादी

यूपीए सरकार की राजनीतिक-चुनावी सोच के कारण नक्सलवादियों की धमकियों के प्रति नरम रूख अपनाए हैं। चुनावी समर्थन के बदले में आंध्र प्रदेश के चुनावों में राज्य की कांग्रेस सरकार ने पीडब्ल्यूजी पर से प्रतिबंध हटा लिया, कांग्रेसी मंत्रियों ने बन्दूक एवं गोलाबारूद हाथ में लिए इनके नेताओं के साथ बातचीत करने में भी संकोच नहीं किया। इस तरह की नीति कांग्रेस पर उलटी पड़ गई और राज्य सरकार को फिर से नक्सली संगठनों पर प्रतिबंध लगाना पड़ा। इसी बीच इन नक्सली ग्रुपों ने फिर से अपना ग्रुप बनाया और मजबूत किया, उन्हें देश में अन्य ग्रुपों के साथ सम्पर्क करने का मौका मिलने का पर्याप्त समय मिल गया।

पिछले तीन वर्षों में देश ने दलगत हितों के लिए यूपीए सरकार द्वारा राष्ट्रीय हितों से समझौता करने के शर्मनाक प्रयास देखे हैं। यह सरकार राष्ट्रीय सुरक्षा कायम रखने में अक्षम रही है। जिसके कारण उग्रवादी वामपंथियों की हिंसा निरंतर बढ़ती रही है। जहानाबाद में जेल तोड़ने की घटना और बिहार में मधुबनी ब्लाक की घटना से पता चलता है कि नक्सलवादी ग्रुप बड़े सहज रूप में अपना काम कर रहे हैं। नक्सलवादियों का उद्देश्य नेपाल से लेकर आंध्रप्रदेश तक एक ''रेड कॉरिडोर'' बनाने का है। यूपीए सरकार के पास इन उग्रवादियों से निपटने की कोई नीति नहीं है। बल्कि सरकार पड़ोसी देश नेपाल में माओवादियों के साथ समझौता करने में भी लगी है।

नक्सलवादियों का खतरा १५ राज्यों में नेपाल से लेकर श्रीलंका तक १७० जिलों में फैला हुआ है। इसका मतलब यह है कि लगभग देश का ४० प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र और ३५ प्रतिशत जनसंख्या खतरे में पड़ जाती है। इसके विपरीत काश्मीर में और पूर्वोत्तर में भी विद्रोह हो रहे हैं जिनसे देश का ११ प्रतिशत क्षेत्र और ४.५ प्रतिशत जनसंख्या प्रभावित होती है। यूपीए की घुटने टेक नीति से नक्सली खतरा अनियंत्रित रूप से बढ़ता जा रहा है।

जम्मू काश्मीर

केन्द्र और काश्मीर दोनों में कांग्रेस गठबंधन की सरकार होने के बावजूद जम्मू और काश्मीर राज्य में किसी भी प्रकार का सुधार दिखाई

नहीं पड़ता है। जम्मू-काश्मीर को राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने की बजाय केन्द्र सरकार निरंतर ऐसे शगूफे छोड़ती रहती है जो पृथकतावादी भावनाओं को और बढ़ाते हैं। कभी १९५३ से पूर्व की स्थिति की चर्चा होती है तो अभी कुछ दिन पूर्व एक निहायत अजीबोगरीब मांग उठी कि जम्मू काश्मीर राज्य की अलग मुद्रा बनायी जाय। १९५३ से पूर्व जब कश्मीर में अलग विधान, अलग प्रधान और अलग निशान था तब भी अलग मुद्रा की बात नहीं थी। यानी आज कांग्रेस इतिहास की उस चूक से एक कदम आगे जा रही है।

इन सारी परिस्थितियों के बीच देश के भिन्न-भिन्न शहरों में नारकीय जीवन जी रहे कश्मीरी पंडितों पर सरकार का ध्यान नहीं जा रहा है।

डोडा से हिन्दुओं का पलायन

पाकिस्तान समर्थित आतंकवाद के चलते जम्मू-कश्मीर से हिन्दुओं का बड़े पैमाने पर पलायन हो रहा है। यहां तक कि लद्दाख और लेह में बौद्ध जनसंख्या अल्पसंख्यक बन गई है। ३० अप्रैल २००६ को कुल्हांड, डोडा में २२ लोगों की हत्या हुई। ये सब के सब हिंदू थे। बसंतगढ़, ऊधमपुर में १३ व्यक्तियों का अपहरण करके हत्या की गई। ये □ी हिंदू थे। पोछड़ा गांव में इसी तरह से १० लोगों की हत्या की गई। यह हमला इस बात को दिखाता है सोची-समझी साजिश के तहत मुताबिक जिन गांवों में हिंदू रहते हैं वहां ऐसा आतंक पैदा कर दिया जाए कि वे वहां से छोड़कर चले जाएं। बसंतगढ़, ऊधमपुर में १३ व्यक्तियों का अपहरण करके हत्या की गई। ०१ मई २००६ को बहड़ा, डोडा में श्री अमीचन्द की हत्या की गई। १२ मई २००६ को डोडा में दो हिन्दुओं की हत्या की गई। १३ मई २००६ को □ाजपा के कार्यक्रम में ग्रेनेड से हमला किया गया, जिसमें दो कार्यकर्ता श्री मुंशी राम और श्री □ारत □ूषण की मृत्यु हुई और ३९ लोग घायल हुए।

पाकिस्तान का नाम लेने में संकोच

सीमापार आतंकवाद बढ़ता जा रहा है, क्योंकि मनमोहन सिंह सरकार कोई सैद्धांतिक दृष्टिकोण नहीं अपना पाई है। यह निर्विवाद सत्य है कि प्रत्येक आतंकवादी हमले में, चाहे वह जम्मू-कश्मीर, नई दिल्ली, अयोध्या, बंगलौर या देश के किसी भी कोने में हुआ हो, पाकिस्तान का हाथ रहा है। परन्तु आश्चर्य की बात है कि यूपीए के

मंत्री पाकिस्तान का नाम लेने तक में संकोच कर रहे हैं। प्रत्येक आतंकवादी हमले के पीछे प्रधानमंत्री कहते हैं कि वे आतंकवाद के साथ लड़ने के लिए देश को कभी संकल्पहीन नहीं कर सकते और साथ ही यूपीए सरकार तोते के रटे रटाए शब्दों को दोहराती है कि पाकिस्तान के साथ वार्ता जारी रहेगी। इससे पाकिस्तान तथा पाक-समर्थित आतंकवाद को और अधिक शह मिलती है।

एनडीए द्वारा जनवरी २००४ में जारी संयुक्त वक्तव्य में श्री अटल बिहारी वाजपेयी तथा पाकिस्तान के राष्ट्रपति श्री परवेज मुशर्रफ ने स्पष्ट रूप से कहा था कि पाकिस्तान अपने किसी क्षेत्र को सीमा-पार आतंकवाद के लिए इस्तेमाल नहीं होने देगा। परन्तु प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह तथा जनरल मुशर्रफ द्वारा संयुक्त वक्तव्य में सीमा-पार आतंकवाद का कोई जिक्र तक नहीं है, जैसे कि अब इसका कोई खतरा ही नहीं है।

पूर्वोत्तर राज्य

पूर्वोत्तर राज्यों की अपनी एक विशिष्ट भौगोलिक स्थिति ही नहीं बल्कि एक विशिष्ट आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति भी है। दुर्भाग्यवश कांग्रेस ने कभी इस क्षेत्र की भावना को सही ढंग से नहीं समझा, और यूपीए के शासनकाल में पूर्वोत्तर के प्रति यही उपेक्षा का रवैया चल रहा है। प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण देश का यह भाग दशकों की उपेक्षा और गलत नीतियों के चलते विकास का वास्तविक रूप नहीं पा सका। लम्बे समय से बंगलादेशी घुसपैठ के चलते यहां की पहचान और सीमित आर्थिक सम्भावनाओं के लिए एक संकट पैदा हुआ। इस समस्या का स्थायी समाधान ढूंढने की बजाय केन्द्र और पूर्वोत्तर राज्यों की सभी कांग्रेस सरकारों ने इन बंगलादेशियों को अपनी संकुचित दृष्टि के चलते वोट बैंक के रूप में देखा। यह भी एक कारण रहा कि सम्पूर्ण पूर्वोत्तर क्षेत्र में सामाजिक और राजनैतिक दृष्टि से अस्थिरता का वातावरण बना और यहां पर अक्सर अलगाववादी समूहों को भी अपना प्रभाव स्थापित करने में सफलता मिली। आज पूर्वोत्तर क्षेत्र के अनेक जिलों की जनसंख्या का स्वरूप बदल गया है, वहां के मूल निवासी अल्पमत में आ गये है। इसके चलते वहां सामाजिक तनाव और सुरक्षा संबंधी समस्याएं उत्पन्न हुई है जो देश के दीर्घकालीक राष्ट्रीय हितों के लिए घातक है।

अभी हाल ही में नगालैंड में डेमोक्रेटिक एलांयस ऑफ नगालैंड जिसमें भाजपा भी शामिल थी, उस सरकार को अलोकतांत्रिक तरीके से हटाकर राष्ट्रपति शासन लगाया गया।

पूर्वोत्तर राज्यों में बिगड़ती हालत

पूर्वोत्तर राज्य मणिपुर में आज की स्थिति में लगता है कि यूपीए सरकार का हुकुम कोई मानता ही नहीं है। स्थिति इस हद तक बिगड़ गई कि मनोरमा के बलात्कार के बाद मणिपुरी महिलाओं ने इसके विरोध में नग्न होकर खुलेआम प्रदर्शन किया। इस प्रकार की घटना आज तक कभी पहले सुनने में नहीं आई। इस घटना के दो महीने बाद गृह मंत्री वहां गए। २००५ में स्थिति इस हद तक बिगड़ी कि छात्रों ने नाकाबंदी कर दी जिससे दो महीने तक मणिपुर में आवश्यक वस्तुएं नहीं पहुंच पाई, जिससे लोगों को अथाह दुख झेलने पड़े। आतंकवादी संगठनों ने लोगों को चुनाव न लड़ने की धमकी दी तथा म्युनिसिपिल चुनावों में अपना मत न डालने को कहा जिससे उम्मीदवार तथा मतदाता चुनावों में भाग नहीं ले सके।

इस प्रकार का संकीर्ण दृष्टिकोण देश के लिए महंगा पड़ रहा है। असम में कांग्रेस सरकार ने करबी अंगलोन में करबीयों और दिमासाओं के बीच बने तनाव के प्रति आंखें मूंद रखी हैं। असम में कांग्रेस सरकार राष्ट्रीय अखंडता पर हो रहे इन हमलों के लोगों के साथ मिली हुई है।

पूर्वोत्तर आज आतंकवाद और विद्रोही संगठनों व आंदोलनों का केंद्र बना हुआ है। गत एक वर्ष के ही घटना को देखें तो वर्ष २००७ में पूर्वोत्तर में १४८६ हिंसक घटनाएं हुई है। ४६८ सामान्य नागरिक आंतकवादी हिंसा के शिकार हुए हैं। इनमें सबसे अधिक २८७ हिंसक घटनाएं केवल असम में हुई है। यहां १०० से अधिक बम विस्फोट में हिंदी भाषी लोगों को उल्फा ने अपनी नफरत का शिकार बनाया है। हिंसा की अन्य घटनाएं अरूणाचल प्रदेश, मणिपुर, नगालैंड, मेघालय और त्रिपुरा में हुई है।

पूर्वोत्तर राज्यों से बांग्लादेशी घुसपैठियों का निरंतर बढ़ता जाना यह देश की सुरक्षा के लिए खतरे की घंटी है। स्वयं विदेश मंत्री प्रणव मुखर्जी बांग्लादेशी घुसपैठियों को बड़ा खतरा बतला रहे हैं पर वोट बैंक राजनीति के कारण यूपीए केंद्र सरकार हाथ पर हाथ धरे बैठी है।

स्थिति यह है कि असम में ४१ विधानसभा क्षेत्र में मुस्लिम घुसपैठिये स्वयं चुनाव परिणाम तय करते हैं। इसी तरह नगालैंड के गृहमंत्री के अनुसार नगालैंड में ७०००० बांग्लादेशी घुसपैठिए घुस आए हैं। यही नहीं नगालैंड में नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नगालैंड के दो गुट सक्रिय हैं। एक गुट इसाक मुइवा के नेतृत्व में है और दूसरा खपलांग गुट है। दोनों ही गुट नगालैंड को पृथक इसाई राज्य राज्य बनाने की मुहिम चला रहे हैं। दोनों गुट की हिंसा में अब तक लगभग ५ हजार लोग मारे गये हैं। केंद्र की यूपीए सरकार सारी परिस्थितियों को जानते हुए भी हाथ पर हाथ धरे बैठी है।

इसी प्रकार मिजोरम में जहां ९०.०२ प्रतिशत जनसंख्या ईसाई है 'मिजो नेशलन फ्रंट' नामक संगठन अलगाव व हिंसक आंदोलन चलाए हुए हैं। यहां के स्थानीय जनजाति समुदाय 'रियांग' के ३० हजार लोगों को इसलिए दर-बदर कर दिया गया है क्योंकि उन्होंने ईसाई बनने से इंकार कर दिया। आज ३० हजार रियांग समुदाय के लोग त्रिपुरा में शरणार्थी के रूप में रहने को विवश हैं।

अरूणाचल प्रदेश में एनएससीएन(आईएम) और खंपलाग गुट सक्रिय है जिनका ज्यादा प्रभाव तिरय और चांग लांग जिलों में है। कुछ समय पहले इन जिलों में जो अरूणाचली जनजाति ईसाई बन गई थी, उनके पूर्वजों की कब्रें खोदकर उन्हें पुनः इसाई तरीके से दफनाया गया। ईसाई कट्टरवाद और दहशत का यह साधारण उदाहरण है। स्थिति यह है कि समूचा मणिपुर नगालैंड, असम, अरूणाचल प्रदेश के तिरथ ओर चांग लांग जिले तथ असम के साथ साझा सीमा वाले अरूणाचल और मेघालय की २० किमी चौड़ी पट्टी और त्रिपुरा के २८ पुलिस स्टेशनों के क्षेत्र अशांत घोषित कर दिए गए हैं।

इसके अलावा असम में हिंदी भाषियों पर अत्याचार व नृशंस हत्या की घटना के कारण बिहारी मजदूरों का पलायन, हाल ही में आदिवासी जनजाति समुदाय पर गुवाहाटी में हिंसक हमला व प्रदर्शनकारी आदिवासी महिला को निःवस्त्र किये जाने की घटना और केंद्र तथा राज्य सरकार का पूरे घटनाक्रम को साधारण घटना बतला कर लीपापोती करने का कुप्रयास यह दर्शाता है कि पूर्वोत्तर राज्य की समस्या को लेकर यह सरकार गंभीर नहीं है और वहां विभाजनकारी तत्वों को परोक्ष रूप से बढ़ावा दे रही है।

अशांत असम

गत ५, ६ और ७ जनवरी, २००७ को लगातार तीन दिन प्रतिबंधित उग्रवादी संगठन यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट और असम (उल्फा) ने असम के पूर्वी हिस्से में कई स्थानों पर हिंसक हमले कर ६८ लोगों की हत्या कर दी। इन हमलों में मुख्य रूप से हिन्दी भाषी लोगों को निशाना बनाया गया, जो मूल रूप से बिहार और पश्चिम बंगाल के रहने वाले हैं। इस प्रकार के सुनियोजित हमले को देखते हुए असम के हिन्दी भाषी निवासियों में आतंक व भय का वातावरण बन गया है। असम की इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना कांग्रेस पार्टी और उसकी सरकार की आतंकवाद और अलगाववाद के प्रति नरम रवैए के नतीजतन हुई है। कांग्रेस पार्टी ने असम के चुनाव के समय उल्फा की सहायता ली थी और यही कारण है कि वहां की कांग्रेसी सरकार प्रतिबंधित संगठन के खिलाफ कोई कारगर और सख्त कार्रवाई नहीं कर पा रही है।

सुप्रीम कोर्ट ने फारेनर्स एक्ट को भी रद्द किया

५ नवम्बर २००६ को सुप्रीम कोर्ट ने सरकार के इस प्रयास को और गहरा झटका दिया जब उसने असम में अवैध आप्रवासियों की पहचान के लिए अलग व्यवस्था करने की सोची। फारेनर्स एक्ट में सुधार करने वाली सरकार की दो अधिसूचनाओं का रद्द करते हुए कोर्ट ने केन्द्र द्वारा पीछे के रास्ते से आईएमडीटी एक्ट को फिर से लागू करने के प्रयास को बंद कर दिया।

केन्द्र की भर्त्सना करते हुए जस्टिस श्री एसबी सिन्हा और श्री मारकंडेय काटजू की पीठ ने कहा– ''यह सुनिश्चित करने के लिए इच्छाशक्ति की कमी है कि अवैध आप्रवासियों को बाहर खदेड़ा जाए'' और केन्द्र को आदेशों पर अमल करने के लिए चार महीने का अल्टीमेटम दिया। फरवरी २००६ में जारी की गई दो अधिसूचनाओं ने अमल में वर्तमान फारेनर्स एक्ट के संशोधन को प्रभावित किया था, जिसके द्वारा कोइ व्यक्ति अवैध अप्रवासी है या नहीं, ट्राइबुनल और शिकायतकर्ता पर सिद्ध करने का भार था, जिसे ट्राइबुनल को संतुष्ट करना था। मूल एक्ट में, यह सिद्ध करने का दायित्व उस व्यक्ति पर था कि वह व्यक्ति था कि वह अवैध आप्रचासी है या नहीं।

आईएमडीटी एक्ट को निरस्त करते हुए पीठ ने देखा कि नई

अधिसूचना जारी कर सरकार कोई उचित स्पष्टीकरण नहीं दे पाई है। आईएमडीटी एक्ट शिकायतकर्ता पर सिद्ध करने का भार था और इस प्रक्रिया के कारण इस प्रकार की शिकायतों की सुनवाई के लिए ट्राइबुनल के बहुत से मामले लम्बित पड़े थे। पीठ ने चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि ''ऐसा लगता है कि २००६ का आदेश इसलिए जारी किया गया ताकि जुलाई २००५ में जारी इस कोर्ट के निदेशों का कार्यान्वयन न किया जाए। इस प्रकार की कार्रवाई को संविधान के अनुच्छेद १४ का उल्लंघन मानते हुए पीठ ने टिप्पणी की ''यह भी देखा गया है कि इस कोर्ट द्वारा दिए गए आदेशों को शून्य करने के लिए यह 'सबोर्डिनेट लेजिस्लेशन' बनाने का प्रयास हुआ है।'' कोर्ट ने याचिकाकर्ता के विचारों से सहमति जताई, जिसने यह आशंका व्यक्त की थी कि अधिसूचना का ही पुनरावतरण है क्योकि किसी अवैध आप्रवासी की पहचान करने का भार ट्राइबुनल पर होगा।

आईएमडीटी एक्ट

७ जुलाई २००५ को सर्वोच्च न्यायालय ने आईएमडीटी एक्ट १९८३ को 'असंवैधानिक' करार दे दिया परन्तु यूपीए सरकार अभी तक भी इस निर्णय पर कोई ठोस कदम नहीं उठा पाई है। इस निर्णय के कार्यान्वयन में विलम्ब करने और समय बर्बाद करने के लिए उसने एक मंत्री–समूह का गठन कर दिया है, परन्तु उसने कुछ काम नहीं किया है। यह बात विशेष रूप से जानबूझ कर असम विधानसभा चुनावों को ध्यान में रख कर की गई क्योंकि कांग्रेस अवैध प्रवासियों के वोट नहीं खोना चाहती थी। असम चुनावों की पूर्व संध्या पर यूपीए सरकार ने 'फारेर्न्स एक्ट' में संशोधन किया जो असम राज्य पर लागू होगा ताकि अवैध प्रवासियों की मदद की जा सके।

अयोध्या में आतंकवाद

अयोध्या में आतंकवादियों का हमला केवल सुरक्षा की चूक नहीं थी बल्कि यह उस सोच का परिणाम थी जिसमें हर बात को 'साम्प्रदायिकता' का नाम दिया जाता है। विशेष रूप से जब यह बात यूपीए की निष्क्रियता अथवा हिन्दुओं के हितों से सम्बंधित होती है। अयोध्या भारत के करोड़ों लोगों की आस्था का प्रतीक है। यह करोड़ों हिन्दुओं की मान्यताओं को प्रदर्शित करता है।

घोटालों की सरकार

बालू का मुद्दा

डीएमके मंत्री द्वारा अपने बेटों को फायदा पहुंचाने के लिए पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस मंत्रालय से अनुरोध करने तथा प्रधानमंत्री कार्यालय द्वारा मंत्रालय को पत्र लिखना दुर्भाग्यपूर्ण है।

मंत्री महोदय ने घोटाले में न केवल अपनी भूमिका को स्वीकार किया है, जिसमें उन्होंने कहा है कि मैने अपने बेटों की स्वामित्व वाली कम्पनियों के लिए पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय से फायदा पहुंचाने की बात का अनुरोध किया है, बल्कि वह बड़ी दिठाई से 'तो क्या हुआ' जैसा रवैया अपनाकर चल रहे हैं।

इस घोटाले का रहस्य खुलने से एक और भी बड़ी बात जुड़ गई है कि प्रधानमंत्री कार्यालय ने डीएमके मंत्री के इस मामले की सिफारिश करते हुए आठ-आठ पत्र पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस मंत्रालय को लिखे हैं।

कोई भी प्रधानमंत्री, जिसे जवाबदेही के सिद्धांत और संसदीय लोकतंत्र के सिद्धांतों पर आस्था है, संसद के दोनों सदनों में ऐसे मामले पर अपनी स्थिति स्पष्ट करना चाहेगा। प्रधानमंत्री का दो कारणों से संसद में वक्तव्य देना नितांत आवश्यक है। पहला, वह सरकार का नेतृत्व कर रहे हैं औरइसलिए वे अपने केबिनेट के मंत्री की काली करतूतों जवाब देने से बच नहीं सकते हैं। दूसरे, वे पीएमओ के कामकाज के प्रति भी जवाबदेह हैं।

कांग्रेस प्रवक्ता का यह बहाना कारगर नहीं हो सकता है कि पीएमओ ने मात्र डीएमके मंत्री के अनुरोध को आगे भेज दिया था। इसका प्रकार का कमजोर बहाना केवल उन्हें लोगों को संतोष दे सकता है जो इस घोटाले को जल्दी से दफना देना चाहते हो।

यूपीए चेयरपर्सन की चुप्पी भी हम मामले में एक दम साफ है

क्योंकि यह बात हर व्यक्ति जानता है कि सरकार की पूरी राजनीतिक सत्ता ही उनके हाथों में है।

प्रधानमंत्री और यूपीए चेयरपर्सन दोनों ही की चुप्पी से पता चलता है कि कांग्रेस पार्टी और उसके नेतृत्व की सरकारों में शुचिता और जवाबदेही किस हद तक गिर गई है जो कभी पहले स्वतंत्रता के दशकों में हुआ करती थी।

क्वात्रोच्चि पर रहम

पिछले वर्ष यूपीए के कानून मंत्री श्री एच.आर. भारद्वाज की कृपा से बोफोर्स मामले में दलाल ओत्तावियो क्वात्रोच्चि के व्यक्तिगत खातों को डिफ्रीज कर दिया गया। सीबीआई सूत्रों के अनुसार इसका मतलब क्वात्रोच्चि के खिलाफ केस को कमजोर किया जाना है। एक ऐसी पार्टी, जिसमें वहां की सुप्रीम लीडर की इजाजत के बिना एक पत्ता भी हिल नहीं सकता है, जिससे निष्कर्ष निकालना जरा भी कठिन नहीं है। कानून मंत्री श्री एच.आर. भारद्वाज ने जो कुछ भी किया, उसे वह अपनी सुप्रीम लीडर की स्वीकृति के बिना करने की हिम्मत कर ही नहीं सकते थे।

वह तब तक यह सब कुछ नहीं कर सकते थे, जब तक उन्हें यह विश्वास न हो जाए कि ऐसा करने से ही उनकी सुप्रीम लीडर खुश होगी। यह बात कि वे खुश थी, इस बात से सिद्ध हो गई जब श्री भारद्वाज की गलती के लिए उन्हें हटाने की बजाए उनको बचाया गया तथा उन्हें लगातार छठी बार राज्यसभा के लिए नामित कर उन्हें पुरस्कृत किया गया।''

यह याद रखना जरूरी होगा कि श्रीमती सोनिया गांधी के साथ क्वात्रोच्चि के व्यक्तिगत सम्बंध सबको मालूम है और कुछ सूत्रों का तो यह भी कहना है कि ये सम्बंध बहुत पहले के हैं। क्वोत्रोच्चि ने गांधी परिवार के सम्बंध में अपनी निकटता की बात अपने विभिन्न साक्षात्कारों में स्वीकार भी की है जिसका किसी ने खण्डन भी नहीं किया है। यूपीए सरकार क्वात्रोच्चि पर बड़ी मेहरबान रही है, हालांकि उनके खिलाफ आज भी रेड कार्नर नोटिस निकला हुआ है। वह अभी तक पुलिस और कोर्ट की निगाह में भगौड़ा है जिसे यूपीए सरकार बचा रही है।

क्वात्रोच्चि गिरफ्तार

२० फरवरी २००७ को क्वात्रोच्चि अर्जेंटीना में गिरफ्तार कर लिया गया। अर्जेंटीना के कानून के मुताबिक भारत सरकार को उसके प्रत्यर्पण के लिए तीस दिनों के अंदर केस फाइल करनी थी, लेकिन संप्रग सरकार ने इस अति महत्त्वपूर्ण सूचना को लोगों से २० दिनों तक छिपाए रखा। दुर्भाग्य है कि यह सूचना लोगों को चैनेलों के माध्यम से मिली। ऐसा लगता है कि सरकार इसे पूरे ३० दिनों तक छिपाए रखना चाहती थी, ताकि क्वात्राच्चि फरार हो जाए। संप्रग सरकार यह कह कर अपना बचाव कर रही थी, कि भारत की अर्जेंटीना से कोई प्रत्यर्पण संधि नहीं है, हालांकि स्रोतों का कहना है कि दोनों देशों के बीच ब्रिटिश काल से ही प्रत्यर्पण संधि है, जिसे दोनों देशों में से किसी ने भी भंग नहीं किया है।

सच तो यह है कि संप्रग सरकार का निर्णय गलत था। गौरतलब है कि अबू सलेम को बिना प्रत्यर्पण संधि के ही पुर्तगाल से भारत लाया गया था।

सीबीआई की लगातार विफलता से न केवल क्वात्रोची को रिहा होने में मदद मिली, बल्कि वह अपने देश लौटने में सफल रहा। सीबीआई अर्जेंटिना के कानूनों के मुताबिक दस्तावेजों को पेश करने में असफल रही। वह २५ मई १९९७ के कोर्ट आदेश को भी प्रस्तुत करने में असफल रही, जिसके आधार पर भगोड़े का प्रत्यर्पण प्रयास जारी था। सीबीआई प्रत्यर्पण सुनिश्चित कराने के लिए अर्जेंटिना कोर्ट में दस्तावेज पेश करने में विफल रही। यह प्रत्यर्पण आदेश के लिए आवश्यक वैधानिक आधारों को भी नहीं पेश कर सकी। सीबीआई का सर्वाधिक हास्यास्पद बहाना यह कि सुप्रीम कोर्ट के आदेश के पांच महीने बाद भी वह अर्जेंटिना कोर्ट के आदेश की आधिकारिक अनुवादिक कॉपी प्राप्त नहीं कर सकी। यह सभी गतिविधियां हमारे इस दावे की भलीभांति पुष्टि करते हैं कि 'क्वात्रोची बचाओ अभियान'

में सीबीआई के जरिए सरकार शामिल है।

स्कोर्पियन पनडुब्बी घोटाला

गत मार्च २००६ में यूपीए सरकार का भ्रष्टाचार का एक बड़ा घोटाला सामने आया। मामला था स्कोर्पियन पनडुब्बी खरीद मामले में लगभग ७५० करोड़ की दलाली लेने का। जिस 'थेल्स' नाम कंपनी से भारत सरकार ने यह पनडुब्बी खरीदी उस कंपनी का नाम विश्व बैंक की काली सूची में दर्ज है। एनडीए सरकार के कार्यकाल में इस कंपनी की अविश्वसनीयता को ध्यान में रखते हुए थेल्स कंपनी के प्रस्तावों को रद्द कर दिया गया था। पर वहीं वर्तमान यूपीए सरकार ने उसी कंपनी से १८७९८ करोड़ रूपये के स्कोर्पियन पनडुब्बी का सौदा किया तथा लगभग ७५० करोड़ रूपये की दलाली इस पूरे सौदे में कुछ बिचौलियों के बीच बांट ली गयी।

मित्रोखिन आर्काइव्ज में खुले भेद

'मित्रोखिन आर्काइव्ज' के प्रकाशन से कांग्रेस और कम्युनिस्टों की शर्मनाक गाथा सामने आई जिससे पता चलता है कि धन के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा को भी खतरे में डाला जा सकता है। इस बात का आरोप लगा है कि इमर्जेंसी के उन बदनाम दिनों में केजीबी ने श्रीमती गांधी के समर्थन देने तथा उनके राजनैतिक विरोधियों के खिलाफ गतिविधियां चलाने के लिए १०.६ मिलियन रूबल (उस समय के विनिमय दर के हिसाब से लगभग १० मिलियन पौंड से अधिक) की राशि खर्च की थी।

केजीबी के पेपरों से यह भी पता चलता है कि १९७७ के चुनावों में केजीबी ने २१ गैर कम्युनिस्ट राजनीतिज्ञों को, जिन में चार केन्द्रीय मंत्री भी शामिल थे, को मदद दी थी। मास्को ने केजीबी के माध्यम से सीबीआई को बडी तादाद में धन दिया था। अकेले १९७५ के पहले छह महीनों में ही २५ लाख रूपए भेजे गए थे।

वोल्कर

पॉल वोल्कर के नेतृत्व में संयुक्त राष्ट्र समिति में जो रहस्योद्घाटन हुए हैं उससे कांग्रेस की विफलताओं की सूची और बढ़ गई। इसमें कांग्रेस और तत्कालीन विदेश मंत्री श्री नटवर सिंह को २००१ में ईराकी तेल बिक्री में गैर अनुबंधीय लाभार्थी के रूप में दिखाया गया

है। शुरू में प्रधानमंत्री श्री मनमोहन सिंह ने श्री नटवर सिंह से मुलाकात करने के बाद अपनी प्रतिक्रिया में कहा कि अनाज के बदले तेल कार्यक्रम के बारे में संयुक्त राष्ट्र जांच में जो कुछ तथ्य सामने आए हैं वे किसी विपरीत निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अपर्याप्त हैं।

बाद में कांग्रेस और प्रधानमंत्री को मुंह की खानी पड़ी जब श्री नटवर सिंह ने त्यागपत्र देने का फैसला किया ताकि कांग्रेस अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गांधी की खाल बचाई जा सके क्योंकि वे भी इस घोटाले में उतनी ही शामिल थी और यह बात उनकी सहमति और जानकारी के बिना नहीं हो सकती थी।

अब जांच श्री नटवर सिंह तक सीमित है और आश्चर्य की बात है कि यूपीए सरकार इस घोटाले पर अजीब सी चुप्पी साधे है जिसमें कांग्रेस भी शामिल है। सरकार ने वोल्कर घोटाले की जांच के लिए जस्टिस आर.एस. पाठक अथोरिटी गठित की है। यह अथोरिटी बड़ी धीमी गति से कार्य कर रही है। इसका ६ महीने का कार्यकाल पूरा हो चुका है। और इसका कार्यकाल आगे बढ़ा दिया गया है।

पाठक अथॉरिटी की रिपोर्ट

जस्टिस आर.एस. पाठक अथॉरिटी की रिपोर्ट से कांग्रेस सुप्रीमो सोनिया गांधी और पूर्व विदेश मंत्री के. नटवर सिंह के लिए गहरा धक्का लगने वाली बात होनी चाहिए क्योंकि ये दोनों उसी दिन से ही अपने को निर्दोष होने का दावा करते आ रहे हैं जबसे संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा नियुक्त वोल्कर कमिटी ने 'अनाज के बदले तेल' के कार्यक्रम के अंतर्गत अमेरिकी राष्ट्रपति द्वारा जारी किए गए तेल वाउचरों में इन दोनों का नाम गैर–अनुबंधीय लाभार्थी के रूप में लिया था। जस्टिस पाठक ने नटवर सिंह, उनके बेटे जगत सिंह दोनों को ही ठेका प्राप्त करने में अपने पदों का दुरूपयोग करने का दोषी पाया है। एक ऐसी पार्टी जहां श्रीमती सोनिया गांधी की स्वीकृति के बिना पत्ता तक भी नहीं हिल सकता तो कैसे यह माना जा सकता है कि जो कुछ हुआ उसके बारे में श्रीमती गांधी को पता ही नहीं था।

जस्टिस पाठक अथॉरिटी रिपोर्ट से प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह द्वारा क्लीन चिट पर भी प्रश्न खड़े हो जाते हैं जिसमें प्रधानमंत्री ने यह दावा किया था कि रिपोर्ट में 'अपर्याप्त साक्ष्य' है जिनसे श्री नटवर

सिंह के खिलाफ किसी विपरीत निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सकता। यदि ऐसी बात है तो जस्टिस पाठक श्री नटवर सिंह को कैसे दोषी ठहरा सकते हैं। यदि ऐसा है तो डा. मनमोहन सिंह ने क्यों नटवर सिंह से विदेश पोर्टफोलियो छीना और कुछ दिनों बाद क्यों उन्हें अपने मंत्रिमंडल से हटा दिया?

बोइंग सौदे में जांच की आवश्यकता

यूपीए सरकार ने एयर इंडिया के लिए विमान प्राप्त करने के लिए जो ढंग अपनाया है उससे भारत और विदेशों में गहरी नाराजगी है। जो प्रक्रिया अपनाई गई हैं उसमें कहीं पारदर्शिता नहीं हैं।

नौसेना वार रूम से सूचनाएं लीक

पिछले दिनों भारतीय सेना के एक प्रमुख अंग नौसेना के वार रूम से कुछ गुप्त सूचनाएं लीक किये जाने व उन्हें विदेशियों को बेचे जाने का मामला सामने आया। इस बात की पुष्टि इससे भी होती है कि इस मामले में नौसेना के ३ अफसरों को बिना किसी कोर्ट मार्शल या जांच के बर्खास्त कर दिया गया। पर जिन लोगों ने यह सूचना लीक की और विदेशियों को बेचा उनके खिलाफ केंद्र सरकार ने कोई कार्यवाही अभी तक नहीं की है। यदि इस मामले में नौसेना के वरिष्ठ अधिकारियों को बर्खास्त किया गया तो इन बिचौलियों को सरकार क्यों बचा रही है? वह भी तो देशद्रोह का मामला है। रक्षा मंत्री प्रणव मुखर्जी का इस पूरे मामले में बयान आश्चर्य में डालने वाला है । उनका कहना है कि लीक हुई सूचनाएं वाणिज्य महत्व की थी।

उपसंहार

देश की समृद्धि, आर्थिक स्थिरता और सामाजिक सुरक्षा के लिए ही जनता सरकार को चुनती है। जनता को ऐसे जनप्रतिनिधियों की जरूरत होती है जो सुशासन एवं मजबूत प्रशासन को बेहतर तरीके से संचालित कर सके जिससे लोगों के जीवन और संपत्ति की सुरक्षा हो सके, उनको रोजगार, भोजन, आवास जैसी बुनियादी जरूरतें पूरी हो सकीं। लेकिन कांग्रेसनीत यूपीए सरकार इन सभी मोर्चे पर असफल साबित हो गई हैं। निश्चित रूप से सरकार ने आम लोगों के साथ विश्वासघात किया है।

कांग्रेस ने अपने घोषणापत्र में जनता से तमाम लुभावने वायदे किए थे लेकिन उसको पूरा करने में वह असफल साबित हुई है। अनेक दलों की मिलीभगत से चल रही यूपीए सरकार के 'न्यूनतम साझा कार्यक्रम' की पोल खुल गई है। सरकार ने तमाम ऐसे जनविरोधी नीतियों को लागू किया है जिससे जनता के बीच बेहद आक्रोश व्याप्त है।

◆◆◆

२००४ के बाद से कांग्रेस पराजय की ओर

(चुनावी प्रदर्शन)

2008

कर्नाटक : भाजपा सरकार (कांग्रेस की पराजय)
नागालैंड : गैर–कांग्रेस गठबंधन सरकार
मेघालय : गैर–कांग्रेस गठबंधन सरकार (कांग्रेस पराजित)
त्रिपुरा : वामपंथी सरकार

2007

गुजरात : भाजपा सरकार (कांग्रेस की पराजय)
हिमाचल : भाजपा सरकार (कांग्रेस की पराजय)
गोवा : कांग्रेस गठबंधन सरकार
उत्तर प्रदेश : बसपा सरकार (कांग्रेस की पराजय)
मणिपुर : कांग्रेस गठबंधन सरकार
पंजाब : शिरोमणि अकाली दल–भाजपा सरकार
उत्तराखंड : भाजपा सरकार (कांग्रेस की पराजय)

2006

असम : कांग्रेस गठबंधन सरकार
केरल : वामपंथी सरकार (कांग्रेस की पराजय)
पांडिचेरी : कांग्रेस गठबंधन सरकार
तमिलनाडु : सहयोगी दल डीएमके की सरकार
प. बंगाल : वामपंथी सरकार

2005

बिहार : जे.डी(यू)–भाजपा सरकार (राजद पराजित)
झारखंड : कांग्रेस के समर्थन से गठबंधन सरकार
हरियाणा : कांग्रेस सरकार

2004

सिक्किम : गैर–कांग्रेस सरकार
उड़ीसा : भाजपा–बीजेडी सरकार
कर्नाटक : भाजपा सबसे बड़े दल के रूप में विजयी
आंध्रप्रदेश : कांग्रेस सरकार
महाराष्ट्र : कांग्रेसनीत सरकार